**संपादन:**
राजेश खिंदरी
दीपक वर्मा
माधव केलकर
रश्मि पालीवाल
सी. एन. सुब्रह्मण्यम
हृदयकांत दीवान

**वितरण:**
महेश बसेड़िया

**सहयोग:**
गजेन्द्र सिंह राठौर
रामभरोस यादव
अनिल पटेल
बृजेश सिंह
राजश्री मंडलोई
गौतम पांडेय

शैक्षिक
# संदर्भ

शिक्षा की द्वैमासिक पत्रिका
अंक-31, अप्रैल-मई 2000

**संपादन एवं वितरण:**
एकलव्य, कोठी बाज़ार
होशंगाबाद – 461 001
फोन: 07574 – 53518
ई-मेल: eklavyamp@vsnl.com

वार्षिक सदस्यता (6 अंक) : 50 रुपए
( ड्राफ्ट एकलव्य के नाम से बनवाएं )

**मुखपृष्ठ:** डी. एन. ए. के खूब सारे तंतु अपने चारों ओर बिखेरता ई. कोलाई बेक्टीरिया। प्रत्येक जीव की हर कोशिका में मौजूद यह डी. एन. ए. अपने आप को कैसे अभिव्यक्त करता है इसके बारे में पढ़िए पृष्ठ 21 पर दिए गए लेख में।

**पिछला आवरण:** कलर ब्लांइडनेस यानी वर्णान्धता को पहचानने के लिए प्रयोग में लाया जाने वाला टेस्ट। आमतौर पर तकरीबन आठ प्रतिशत लोग कलर ब्लांइड होते हैं यानी कि वे कुछ रंगों में विभेद नहीं कर पाते। यह समस्या ज़्यादातर लाल और हरे रंग में अंतर करने में देखी जाती है। अगर कोई व्यक्ति पिछले आवरण पर दिए गए दाहिने गोले में लिखे अंक को नहीं पढ़ पाता तो उसका अर्थ है कि उसे कुछ रंग पंहचानने में समस्या आती है।

इस अंक में निम्न किताबों से चित्र लिए गए हैं: ***जेनेटिक्स:*** *रॉबर्ट एफ. विवर, फिलिप डब्लू. हेडरिक, प्रकाशक: डब्लू एम. सी पब्लिशर्स।* ***मॉडर्न केमिस्ट्री:*** *ज़िमोपोलोस, मेटकॉफ, विलियम, कास्टका, प्रकाशक: हॉल्ट, राइनहार्ट, विन्सटन; ऑस्टीन।* ***क्रिएटिव एंड मेंटल ग्रोथ:*** *विक्टर लोवेनफील्ड, डब्लू लेमबर्ट, ब्रिटेन; प्रकाशक: द मेकमिलन कंपनी, लंदन।* ***द नेटवर्क ऑफ लाइफ बायॉलोजी:*** *माइकल सी. सिम्स, पॉल फारबर, कीथ आई. किंग। प्रकाशक: हारपर कोलिंस कॉलेज पब्लिशर्स।* ***लाइफ द साइंस ऑफ बायॉलोजी:*** *विलियम के. पुरव, गोर्डन एच. ओरिएंस। प्रकाशक: सिनाउर एसोसिएट, संडरलैंड।* ***जेनेटिक्स:*** *मोनरो डब्लू. स्ट्रीकबर्गर। प्रकाशक: मेकमिलन पब्लिशिंग कंपनी।* ***भारत की छाप:*** *चयनिका शाह, सुहास परांजपे, स्वातिजा मनोरमा। प्रकाशक: कॉमेट प्रोजेक्ट, बंबई।* ***द नेचुरल हिस्ट्री ऑफ एवोल्युशन:*** *फिलिप विटफील्ड। प्रकाशक: डबल डे पब्लिशर्स लिमिटेड।*

मानव संसाधन विकास मंत्रालय की एक परियोजना के तहत प्रकाशित

संदर्भ में छपे लेखों में व्यक्त मतों से मानव संसाधन विकास मंत्रालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

# संदर्भ सजिल्द सं

## हर जिल्द में हैं:

भौतिकी, रसायन, प्राणिशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र,
प्राणी व्यवहार, सूक्ष्मजैविकी, गणित, इतिहास,
भूगोल-भूविज्ञान, वैज्ञानिकों की जीवनियां,
पढ़ाने के तरीके, बच्चों के साथ अनुभव,
प्रयोग-मॉडल एवं गतिविधियां,
सर्वे रिपोर्ट, कहानियां, पहेलियां
और
सवालीराम के सवाल-जवाब

**संदर्भ अंक 1-6, 7-12, 13-18, 19-25 और 26-30 के सजिल्द संस्करण उपलब्ध हैं। इनके साथ है प्रकाशित अंकों का विषयवार इंडेक्स।**

**प्रत्येक का डाक-खर्च सहित मूल्य 65 रु.।**

**राशि डिमांड ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से भेजें।**
**ड्राफ्ट एकलव्य के नाम से बनवाएं।**
**अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें।**

एकलव्य
कोठी बाज़ार
होशंगाबाद, म. प्र, 461001
फोन: 07574 - 53518

एकलव्य
ई - 1/25, अरेरा कॉलोनी
भोपाल - 462 016
ई - मेल: eklavyamp@vsnl.com

## सूचक . . . . . 9

लिटमस पेपर, फिनॉफ्थेलीन, मिथाइल ऑरेंज . . . . वगैरह की खास बात यह है कि ये अम्ल-क्षार की पहचान में सहायक होते हैं। मज़ेदार बात तो यह है कि यह कतई ज़रूरी नहीं कि जिस घोल को लिटमस क्षारीय बताता है, उसी घोल को फिनॉफ्थेलीन भी क्षारीय ही बताए। आप भी सोचने लगे होंगे कि मामला क्या है, आखिर सूचक ऐसा क्यों करते होंगे . . . ?

## सावन का महीना . . . . 31

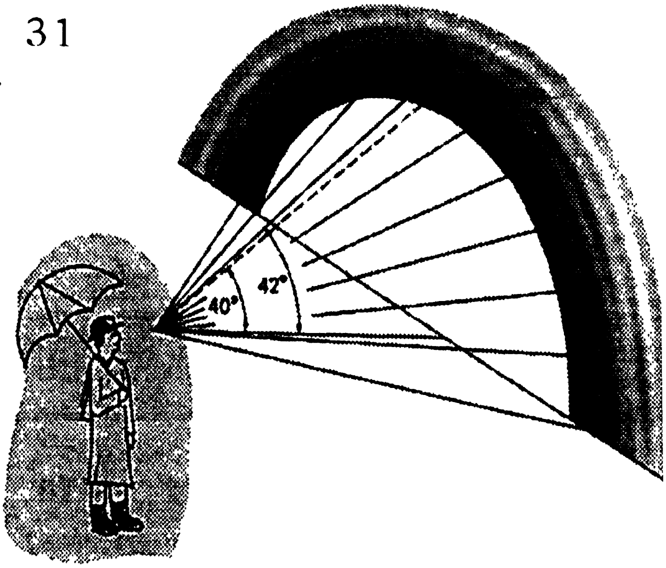


बरसात के दिनों में ऐसा अक्सर होता है कि धूप भी खिली हो और हल्की-हल्की बूंदा-बांदी हो रही हो। लोग कहते हैं – देखो रे, जंगल में सियार की शादी हो रही है। आपने गौर किया होगा ऐसे में अक्सर आसमान में इन्द्रधनुष भी दिखाई दे जाता है। यह धनुष बनता कैसे है इस सवाल का जवाब तलाशने की दो हज़ार साल से भी लंबी यात्रा का विवरण पढ़िए इस लेख में।

## हृदय एक पंप है . . . . 51

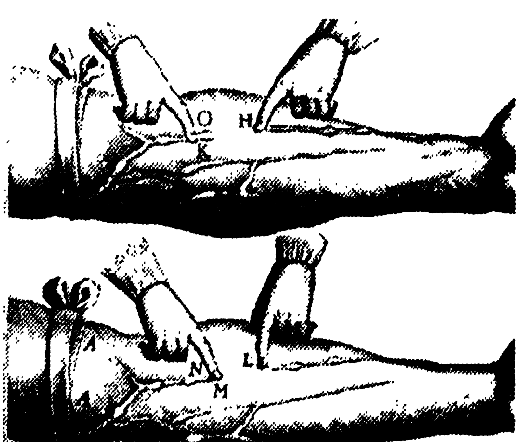

हार्वे मरते हुए जानवरों के हृदय का अध्ययन करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि हृदय एक पंप है जो खून को धड़कनों के ज़रिए धकेलता है। लगभग 1500 साल बाद किसी ने पुरानी मान्यताओं में बदलाव की बात की थी, लेकिन कितना मुश्किल होता है चली आ रही परिपाटी को तोड़ पाना।

## शुल्व सूत्र: रेखागणित की शुरुआत . . . . 61

वैदिक लोगों के रेखागणितीय ज्ञान के बारे में शुल्व सूत्र में कुछ विवरण मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि वे लोग यज्ञों के लिए विविध आकार की ईंटों की वेदियां बनाते थे। यज्ञ के उद्देश्य के आधार पर पुरोहित वेदियों के आकार तय करते थे और कारीगर उसके अनुरूप ईंटें बनाते थे। विविध स्रोतों से यह बात भी उभरकर आती है कि वैदिक कालीन रेखागणित का विकास पुरोहितों और कारीगरों की मिलीजुली कोशिशों के कारण संभव हो सका था।

## अनारको . . . . 83

इस बार अनारको की मुलाकात हुई चोर अंकल से। चोर को अनारको की फर्क नज़र से देखती एक कहानी।

# शैक्षिक संदर्भ

अंक 31, अप्रैल-मई 2000


## इस अंक में


आपने लिखा. . . . 4

सूचक . . . . 9
*सुशील जोशी*

वर्नियर का सिद्धांत . . . . 16
*विनोद कुमार गुप्ता*

डी. एन. ए. से प्रोटीन . . . . 21
*पूर्णिमा भार्गव*

ज़रा सिर तो खुजलाइए . . . 28

सावन का महीना . . . . 31
*प्रदीप गोठोस्कर*

लोग और उनकी सोच . . . . 47
*उमा अय्यर*

हृदय एक पंप . . . . 51

शुल्व सूत्र में रेखागणित . . . 61
*रामकृष्ण भट्टाचार्य*

जादुई गुब्बारा . . . . 74
*चंपालाल कुशवाहा*

बच्चे और उनके खिलौने . . 77
*कमलेश चंद्र जोशी*

अनारको और चोर अंकल . . 83
*सतीनाथ षडंगी*

संदर्भ इंडेक्स (26-30) 91

# आपने लिखा

कुछ साल पहले मैंने संदर्भ का चंदा भरा था परंतु उसके बाद नहीं भरा, क्योंकि पता ही नहीं चला कि उसका समय कब समाप्त हो गया। परंतु फिर भी आप संदर्भ लगातार भेजते जा रहे हैं। कृपया बताएं कि कितने का मनीऑर्डर करना है ताकि मैं अपने ऊपर चढ़े उधार को उतार सकूं।

चंदा समाप्त होने के बाद भी पुस्तक भेजना आपकी भलमनसाहत समझी जाए कि लेखा विभाग की गलती? कृपया बताएं।

प्रवीण शर्मा (एडवोकेट)
ई-3/33, सैक्टर–II
रोहिणी, दिल्ली

आज तक मुझे जो भी अंक मिले उनकी सामग्री वास्तव में बहुत ही नवीन व परंपरा से हटकर तथा ज्ञानवर्द्धक लगी।

पुस्तक में विज्ञान से संबंधित छोटी-छोटी बातों व प्रचलित धारणाओं को तर्कसंगत ढंग से समझाने का प्रयास तथा सुलझाने का ढंग, दोनों ही प्रशंसनीय हैं।

पुस्तक के कवर के भीतर व बाहर के चित्र बहुत ही स्पष्ट व वास्तविकता के नज़दीक ले जाने वाले होते हैं।

संदर्भ में जो कहानी दी जाती है वह भी परंपरागत कहानियों से हटकर मनोरंजक तथा ज्ञानवर्द्धक होती है।

मैं भी एक प्राथमिक विद्यालय का शिक्षक हूं। यद्यपि मेरी शैक्षिक पृष्ठभूमि कला विषयों की रही है फिर भी सामान्य शिक्षक होने के कारण मुझे सामाजिक विज्ञान व सामान्य विज्ञान दोनों ही पढ़ाने पड़ते हैं। इसलिए मुझे आपकी पुस्तक से बहुत सहायता मिलती है।

मेरा सुझाव यह है कि कृपया पुस्तक में भौगोलिक सम्प्रत्यों व तथ्यों को भी विश्लेषित कर समझाने की कोशिश करें।

साथ ही आप पुस्तक में पूर्ण पृष्ठ पर किसी भी महान वैज्ञानिक का रंगीन चित्र प्रत्येक अंक में प्रकाशित करें, क्योंकि वैज्ञानिकों के चित्र बाज़ार में मुश्किल से मिलते हैं।

रमेश कुमार जांगिड़, भिरानी
रा. उ. प्रा. वि. अलायला
भादरा

मेरे ख्याल से संदर्भ में मूलभूत विज्ञान के संबंध में आधुनिकतम शोध, पर्यावरण संरक्षण और गैर-परंपरागत ऊर्जा स्त्रोतों की नवीनतम तकनीक जैसे विषयों को अधिक सम्मिलित करने की कोशिश करना चाहिए।

दिनेश कुमार व्यास
मंदसौर, मध्यप्रदेश

शैक्षिक संदर्भ का 30वां अंक हाथों में है। संपादकीय पढ़कर बहुत खुशी हुई। मुझे आशा है कि संदर्भ के प्रसार में ज़रूर वृद्धि होगी। आखिरकार पत्रिका ही ऐसी है। रेखागणित, चुंबक तथा नदी अपहरण लेख रुचिकर लगे क्योंकि इसकी

मामग्री अन्य लेखों से हटकर थी।

'प्रकाश संश्लेषण' तथा 'हवा का दबाव' भी ज्ञानवर्धक थे। कहानी ने पत्रिका को संपूर्णता दिला दी। कुल मिलाकर इस अंक ने लगभग हर विषय को थोड़ा बहुत छुआ है।

मुखपृष्ठ देखकर सर खुजलाने लगा, परंतु पत्रिका पढ़कर लगा कि मुखपृष्ठ बिल्कुल लेख के अनुसार है।

इतनी उच्च कोटि की पत्रिका के लिए मैं भी कुछ सुझाव देना चाहता हूं जिससे 'संदर्भ' और अधिक लोकप्रिय हो सके।

1. हर अंक में 'संपादकीय' अवश्य लिखें क्योंकि यही स्तंभ संपादक का होता है और संपादक अपनी बात नए ढंग से रखता है। पाठक भी विचारों को जानने के लिए उत्सुक रहते हैं।
2. अनुक्रमणिका के लिए पूरा एक पन्ना रखें।
3. कठिन शब्दों को हिन्दी एवं अंग्रेज़ी दोनों ही भाषा में लिखें तो और सुविधाजनक होगा।
4. एक संक्षिप्त विज्ञान समाचार स्तंभ शुरू करें।
5. एकलव्य प्रकाशनों की सूची हर अंक में दें।
6. विभिन्न पाठकों से प्रश्न आमंत्रित करें तथा उनके उत्तरों को विस्तार से प्रकाशित करें।

अरविंद कुमार कुरील
मुंबई

**संदर्भ** 29 देख रहा हूं। नंदी जी का प्रयोग पढ़ रहा था। ऐसे ही प्रयोगों और नवाचारों से भरे संदर्भ को देखकर मुझे इससे अपनत्व हो गया है। मैंने भी अपने पिछले पांच वर्षों के अध्यापन काल में कुछ सफल प्रयोग किए हैं।

मेरे कई प्रयोग एकलव्य से साम्य रखते हैं और कई तो परिस्थितियों की पैदाइश हैं। वैसे मैं कोई शिक्षण मिशन या विशेषज्ञता से नहीं जुड़ा हूं फिर भी कोशिश करूंगा कि अपने अनुभवों को संदर्भ के माध्यम से अन्य पाठकों के साथ बांट सकूं।

अजित जैन जलज
टीकमगढ़, मध्यप्रदेश

**मैं** कक्षा 10वीं का छात्र हूं। मुझे संदर्भ का अंक-30 प्राप्त हुआ। उस दिन मेरी विज्ञान की परीक्षा भी थी और विज्ञान में प्रकाश संश्लेषण से संबंधित कुछ कठिनाइयां थीं, लेकिन किशोर पंवार का लेख 'पौधों में भोजन' पढ़कर मेरी सारी कठिनाइयां दूर हो गईं और मुझे प्रकाश संश्लेषण के बारे में नई जानकारियां प्राप्त हुईं।

मैंने विज्ञान विषय से संबंधित सब लेख एक साथ ही पढ़ डाले। सभी लेख स्तरीय हैं।

दीपक कुमार सोंधिया
एम. पी. ई. बी. कॉलोनी
उमरिया, मध्यप्रदेश

# हवा का दबाव: लेख पर टिप्पणियां . . . .

मुझे संदर्भ नियमित रूप से प्राप्त हो रही है। वैसे मैं संदर्भ के सभी लेख नहीं पढ़ सकता लेकिन मैं उन लेखों को ज़रूर पढ़ता हूं जो मेरी रुचि के होते हैं। मैं संदर्भ के अंक-30 में अमिताभ मुखर्जी के लेख 'हवा का दबाव' पर कुछ टिप्पणियां दे रहा हूं।

1. पृष्ठ 36 पर लेखक कहता है कि "धरती के चारों ओर मौजूद हवा के कॉलम (स्तंभ) के कारण हवा का दबाव होता है।" यदि हम इस बात को सही मान लेते हैं तो निम्न दो स्थितियों में 'हवा के दबाव' पर विचार करना होगा।

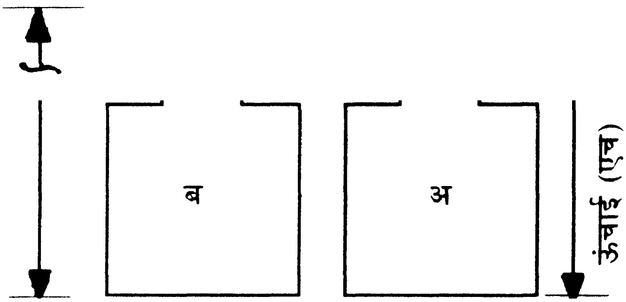


स्थिति 'अ' में हवा का दबाव हवा के स्तंभ की ऊंचाई 'एच' की वजह से होगा और 'ब' में हवा का दबाव, हवा के सम्पूर्ण वायुमंडलीय कॉलम की वजह से होगा। ऐसे में 'अ' में हवा का दबाव 'ब' से कम होना चाहिए, लेकिन जैसा कि हम जानते हैं यह सही नहीं है। दोनों स्थितियों में दबाव बराबर रहता है।

दबाव बराबर होने की व्याख्या हम केवल हवा के अणुओं की गतिज ऊर्जा से कर सकते हैं। किसी एक खास जगह पर हवा के अणुओं की गतिज ऊर्जा दोनों स्थितियों में समान होगी इसलिए वहां पर हवा का दबाव भी समान होगा।

2. पृष्ठ 38-39 पर लेखक विभिन्न ऊंचाइयों पर दबाव में अंतर को समझाते हुए बताता है कि यहां भी हवा के स्तंभ की ऊंचाइयों में अंतर है। ऊंचे स्थानों पर हवा का कॉलम छोटा होगा, लेकिन मेरे विचार से ऐसा नहीं है। ऊंचे स्थानों पर हवा का दबाव कम होने का कारण यह होना चाहिए कि वहां पर हवा का घनत्व कम होता है और तापमान भी, इसलिए हवा के अणुओं की गतिज ऊर्जा भी कम होगी। इसलिए ऊंचे स्थान पर हवा का

दबाव भी कम होगा।

3. पृष्ठ 36 पर लेखक कहता है

दबाव = ऊंचाई X घनत्व

क्या यह ऐसे नहीं होना चाहिए: दबाव = ऊंचाई X घनत्व X गुरुत्व बल

4. पृष्ठ 38 पर 'वायुमंडल का दबाव लगभग 1 किलोमीटर/ वर्ग सेंटीमीटर होता है'। यहां पर किलोमीटर की जगह किलोग्राम होना चाहिए था।

समर बागची
11 ए, सुल्तान आलम रोड़
कलकत्ता

**संदर्भ** का 30 वां अंक मिला। कवर और बैक कवर बहुत अच्छे लगे। उमेश चौहान के लेख और चित्रों ने तो कमाल ही कर दिया। उन्हें हार्दिक बधाई। इसी तरह संजय तिवारी का लेख 'नदी अपहरण' बहुत बढ़िया लगा। भूगोल विषय इतना रोचक व रोमांचक है यह इस लेख को पढ़कर अनुभूति हुई। वरना मैं तो भूगोल को उबाऊ और नीरस ही समझता था। इतना जीवंत लेख पहली बार पढ़ने में आया। इस लेख के लिए लेखक को साधुवाद।

एक बात की शिकायत ज़रूर करूंगा, वह है पत्रिका के प्रकाशन में देरी। कृपया कुछ कीजिए। अच्छी और स्तरीय सामग्री के साथ पत्रिका की नियमितता भी संदर्भ के उज्जवल भविष्य के लिए ज़रूरी है।

किशोर पंवार
प्राध्यापक, वनस्पति विज्ञान
सेंधवा, मध्यप्रदेश

**संदर्भ** से प्रथम साक्षात्कार अंक 29 से हुआ। अब लगता है कि संदर्भ के साथ यह सफर प्रारंभिक अंकों से भी हो सकता था। खैर रुचिकर और पठनीय 30वें अंक के लिए बधाई।

नदी अपहरण, चुंबक इतिहास के आइने में, प्राचीन भारत में रेखागणित ... जैसे लेख न केवल हमारे ज्ञान में वृद्धि करते हैं अपितु हमारी विश्लेषणात्मक क्षमता को बढ़ाने में भी सहायक होते हैं।

संपादकीय टिप्पणी विचारणीय है। संदर्भ की यात्रा अविरत हो इसके लिए आपके साथ हम पाठकों को भी प्रयास करने होंगे। कोशिश कर रहा हूं कि शहर के पुस्तकालय व पुस्तक विक्रेता संदर्भ रखने में रुचि लें।

रोहित शुक्ला
सुभाष कॉलोनी
छिंदवाड़ा, मध्यप्रदेश

**अंक** 30 मेरे हाथों में है। अबकी बार संदर्भ में अनेक आकर्षण भरे पड़े हैं। कौन-से लेख की प्रशंसा करूं और कौन-से की नहीं? हर एक 'एक से बढ़कर एक' है। फिर भी मुझे 'ज़रा सिर खुजलाइए' सर्वप्रिय है। मैं संदर्भ की विषय-सूची को देखते ही यह कॉलम पढ़ने लगता हूं।

इस अंक से आपने रामकृष्ण भट्टाचार्य द्वारा लिखित 'प्राचीन भारत में रेखागणित' आलेख को अगले छह अंकों में प्राचीन भारत में रेखागणित के विभिन्न पहलुओं की जानकारी देने के लिए आरंभ किया है। यह बहुत ही प्रशंमनीय है। 'कहां है मेरे दोस्त का घर' कहानी दिल को छू गई। अन्य सामग्री भी आकर्षक लगी।

शैक्षिक संदर्भ के बारे में मेरे भी कुछ सुझाव हैं। जैसा कि आपने इस अंक में स्पष्ट किया कि आप संदर्भ को खुले बाज़ार में बुक स्टॉल्स पर उपलब्ध करवाने जा रहे हैं। यह एक प्रशंसनीय एवं सराहनीय कदम है। इसमे संदर्भ सामान्य पाठकों तक भी पहुंचेगी। मेरा सुझाव यह है कि आप संदर्भ में कोई ईनामी प्रतियोगिता को स्थान दें। इससे संदर्भ के पाठकों में वृद्धि होगी।

मेरा दूसरा सुझाव है कि आप इसमें एक ऐसा कॉलम शुरू करें जिसमें पाठकों द्वारा सामान्य एवं विज्ञान से संबंधित पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दिए जाएं। इससे भी पाठकों की संख्या में वृद्धि होगी और पाठकों को अपनी जिज्ञासा पूरी करने का अवसर प्राप्त होगा। तीसरा कि संदर्भ खुले बाज़ार में दो महीने के शुरुआत में ही पहुंच जानी चाहिए। संदर्भ का मूल्य भी ऐसा हो कि सामान्य व्यक्ति को इसे खरीदने में अपनी जेब की चिन्ता न रहे। संदर्भ को खुले बाज़ार में लाने का प्रयास करने पर आपको हार्दिक बधाई।

राम कुमार वर्मा
मोरनी
ज़िला पंचकूला, हरियाणा

**पिछले** अंक की संपादकीय पढ़ी। इस पत्रिका की महत्ता को देखते हुए इसका सभी जगह उपलब्ध होना ज़रूरी है।

यह पत्रिका अन्य विज्ञान की पत्रिकाओं से अपनी अलग पहचान रखती है अत: इसका देर से उपलब्ध होना सराहनीय एवं उचित है। हमें इसमें प्रकाशित सामग्री बेहद पसंद आती है।

आपके द्वारा भेजा गया फिल्टर पेपर हमारी जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण खत्म हो गया, उसे हमने पड़ोसी रिश्तेदार के दूध के परीक्षण के लिए भेज दिया था। अत: आपसे नम्र निवेदन है कि यदि संभव हो सके तो दुबारा फिल्टर पेपर भिजवाने की कृपा करें।

पवन कुमार जैन
नीमच खेड़ा, उदयपुर
राजस्थान

# सूचक

## क्या बताते हैं सूचक रंग बदलकर?

सुशील जोशी

अम्ल, क्षार की पहचान करते समय अक्सर सूचकों का इस्तेमाल होता है। लेकिन सूचकों का इस्तेमाल करते हुए शायद ही हम कभी यह सोचते हैं कि सूचक काम कैसे करते हैं, और क्या सब सूचक एक जैसे होते हैं?

अम्ल और क्षार की पहचान करने में सूचकों का उपयोग तो हम सबने किया है, लिटमस, फिनॉफ्थेलीन, मिथाइल ऑरेंज. . . वगैरह कितने ही सूचक हम जानते भी हैं। इन सबकी विशेषता यह है कि ये अम्लीय माध्यम में किसी एक रंग के होते हैं तो क्षारीय माध्यम में किसी और रंग के।

### क्यों बदलते हैं रंग

सबसे पहला सवाल तो यही उठता है कि ये रंग बदलते क्यों हैं? इस सवाल का जवाब काफी आसान है। ये सूचक ऐसे पदार्थ हैं जो दो रूपों में रह सकते हैं। एक रूप से दूसरे में इनका परिवर्तन काफी आसानी से होता है। और सबसे बड़ी बात यह है कि यह रूप परिवर्तन रसायन की भाषा में उत्क्रमणीय होता है; यानी रूप परिवर्तन पुनः बहाल किया जा सकता है। रूप परिवर्तन मूलतः इस बात पर निर्भर होता है कि माध्यम क्षारीय है या अम्लीय।

उदाहरण के लिए फिनॉफ्थेलीन को लें। यह पदार्थ स्वयं एक अम्ल है। इसका सूत्र इस तरह लिखा जा सकता है: H Ph ; मगर यह स्थिति अम्लीय घोल में होती है, और उस समय यह घोल रंगहीन होता है।

जब घोल क्षारीय होता है तो

इसका आयनीकरण हो जाता है:

$$HPh \longrightarrow H^+ + Ph^-$$

यह $Ph^-$ ऋणायन गुलाबी होता है। इसलिए क्षारीय घोल में फिनॉफ्थेलीन गुलाबी हो जाता है। जबकि जैसे कि हमने पहले देखा, HPh रूप रंगहीन होता है।

समस्त सूचक स्वयं दुर्बल कार्बनिक अम्ल या कार्बनिक क्षार होते हैं। प्रत्येक मामले में आयनीकृत अवस्था और अन-आयनीकृत अवस्था का रंग अलग-अलग होता है। यही इनके रंग बदलने का राज़ है।

## सूचक-सूचक एक समान?

इस आसान सवाल के बाद एक मुश्किल सवाल पर आते हैं। सवाल यह है कि क्या सभी सूचक अम्ल को अम्ल और क्षार को क्षार बताते हैं। बात को स्पष्ट करना ज़रूरी है क्योंकि बात थोड़ी गोल-गोल लग रही होगी। बात को स्पष्ट करने के लिए ज़रूरी है कि अम्ल और क्षार को परिभाषित कर दिया जाए।

वर्तमान मकसद से मैं अम्ल और क्षार की सबसे सरल परिभाषा से ही शुरू करता हूं। जो नीले लिटमस को लाल कर दे, वह अम्ल और जो लाल लिटमस को नीला कर दे, वह क्षार।

अब मान लीजिए पदार्थ 'क' ने लाल लिटमस को नीला कर दिया, तो यह हो गया क्षार। सवाल यह है कि यदि हम फिनॉफ्थेलीन सूचक का इस्तेमाल करें तो क्या वह भी इसे क्षार बताएगा? यानी क्या इस घोल में रंगहीन फिनॉफ्थेलीन डालने पर वह गुलाबी हो जाएगा? आपका क्या विचार है?

यानी मैं यह पूछ रहा हूं कि लिटमस जिस घोल को क्षारीय बताता है क्या उसे फिनॉफ्थेलीन भी क्षारीय बताएगा?

आपको शायद लगे कि यह सवाल ही बेतुका है। जब घोल क्षारीय है, तो फिनॉफ्थेलीन हो या कोई भी सूचक हो, उसे क्षारीय ही बताएगा।

मगर बदकिस्मती (या खुश-किस्मती) से ऐसा नहीं है। कई मर्तबा ऐसा हो जाता है कि एक सूचक जिस घोल को अम्लीय बताता है, दूसरा सूचक उसे क्षारीय दर्शाता है।

## पानी की क्षारीयता

आइए, पानी का उदाहरण लेकर इस बात को समझने की कोशिश करें। साधारण पानी के परीक्षण में उसकी क्षारीयता का मापन किया जाता है। यह काम किसी भी मानक अम्ल के घोल से पानी के अनुमापन (टाइट्रेशन) के द्वारा किया जा सकता है। करते यह हैं कि जिस पानी का परीक्षण करना हो उसे नापकर एक फ्लास्क में ले

लेते हैं। इसमें 2-3 बूंद फिनॉफ्थेलीन (रंगहीन) सूचक डाल देते हैं। यह गुलाबी हो जाता है। (पानी क्षारीय है)। अब ब्यूरेट से अम्ल डालते हैं, जब तक कि पानी रंगहीन न हो जाए। पानी के रंगहीन हो जाने तक जितना अम्ल डाला है उसके आधार पर पानी में उपस्थित क्षार की मात्रा की गणना कर लेते हैं।

फिनॉफ्थेलीन (गुलाबी) सूचक रंगहीन हो गया मतलब घोल उदासीन है (या थोड़ा अम्लीय होगा)। अब इस 'उदासीन' घोल में मिथाइल ऑरेन्ज की दो-तीन बूंदें डालते हैं। उम्मीद के विपरीत मिथाइल ऑरेन्ज इसे क्षारीय दर्शाता है (यानी पीला रंग देता है)। अब एक बार फिर इसमें अम्ल डालकर टाइट्रेशन करते हैं और तब तक अम्ल डालते हैं जब तक इसका रंग नारंगी न हो जाए। और एक बार फिर इसकी क्षारीयता की गणना करते हैं।

दरअसल पानी परीक्षण के संदर्भ में इन दो क्षारीयताओं को फिनॉ-फ्थेलीन क्षारीयता और कुल क्षारीयता (फिनॉफ्थेलीन + मिथाइल ऑरेन्ज) के नाम दिए गए हैं। तो यह क्या चक्कर है? जिस घोल को फिनॉफ्थेलीन ने उदासीन घोषित कर दिया, उसे मिथाइल ऑरेन्ज ने क्षारीय क्यों बताया?

### परिभाषा का विस्तार

इसे समझने के लिए हमें अम्ल और क्षार की परिभाषा की अगली पायदान पर जाना होगा। यह परिभाषा आयनीकरण की अवधारणा से उभरती है। वे सारे पदार्थ जो पानी में घुलने पर हाइड्रोजन आयन उत्पन्न करते हैं,

## आसपास बिखरे हैं सूचक

अपने आसपास चारों तरफ ढेरों सूचक बिखरे रहते हैं। अक्सर हमें अंदाज़ा ही नहीं होता कि खाने में इस्तेमाल होने वाली हल्दी, बेशरम या गुड़हल का फूल, सफाई के काम आने वाला डोमेक्स का घोल, कुछ स्याहियां, बहुत से अन्य फूल, और भी जाने कौन-कौन से सूचक बिखरे पड़े हैं चारों तरफ।

अपने इर्द-गिर्द बिखरे हुए विभिन्न सूचक पहचानना और देखना कि वे अम्ल और क्षार के साथ क्या-क्या रंग बदलते हैं, अपने आप में एक मज़ेदार गतिविधि हो सकती है। और अगर इस अभ्यास को और चुनौतीपूर्ण बनाना हो तो फिर आप ये भी पता लगाने की कोशिश कर सकते हैं कि इनमें से हर सूचक किस pH पर अपना रंग बदलता है। एक अच्छा-खासा प्रोजेक्ट बन सकता है यह प्रयास।

अम्ल हैं। पानी में घुलकर हाइड्रॉक्सिल आयन उत्पन्न करने वाले पदार्थ क्षार हैं। अर्थात् यदि HA अम्ल है तो पानी में यह निम्नानुसार आयनीकृत होगा:

$HA \rightarrow H^{+} + A^{-}$

और यदि BOH पदार्थ क्षार है तो यह निम्नानुसार व्यवहार करेगा:

$BOH \rightarrow B^{+} + OH^{-}$

इसका मतलब यह नहीं है कि अम्ल के घोल में हाइड्रॉक्सिल आयन नहीं होते या क्षार के घोल में हाइड्रोजन आयन नहीं होते। एक नियम के तौर पर आप यह याद रख सकते हैं कि पानी चाहे शुद्ध हो या मिलावटी उसमें हाइड्रोजन आयन की सान्द्रता और हाइड्रॉक्सिल आयन की सान्द्रता का गुणनफल हमेशा निश्चित होता है:

$[H^{+}] \times [OH^{-}] = 10^{-14}$

अर्थात $H^{+}$ की सान्द्रता बढ़ने पर $OH^{-}$ की सान्द्रता उसी अनुपात में कम होती जाएगी ताकि दोनों का गुणनफल $10^{-14}$ ही रहे। इसलिए किसी घोल की अम्लीयता व क्षारीयता दोनों को हम $H^{+}$ आयन की सान्द्रता के रूप में व्यक्त कर सकते हैं। इसके लिए एक आसान पैमाना बनाया गया है। इसे pH पैमाना कहते हैं। यह घोल में $H^{+}$ आयन की सांद्रता दर्शाता है:

| | | |
|---|---|---|
| pH | 7 से कम | घोल अम्लीय |
| pH | ठीक 7 | घोल उदासीन |
| pH | 7 से ज़्यादा | घोल क्षारीय |

pH पैमाने को समझने में जिनकी दिलचस्पी हो, वे इस लेख के अंत में दिया गया बॉक्स ज़रूर पढ़ें।

किसी भी अम्ल या क्षार को पानी में घोलें तो उस घोल की pH अम्ल या क्षार की प्रकृति पर निर्भर करती है। हां, उस पर अम्ल या क्षार की मात्रा का थोड़ा-बहुत असर ज़रूर पड़ता है और तापमान का भी असर पड़ता है। मगर मूलत: यह उस अम्ल या क्षार की प्रकृति से ही तय होता है कि उसकी pH कितनी होगी।

7 से जितनी कम pH होगी, वह अम्ल उतना ही प्रबल होगा। इसके विपरीत pH, 7 से जितनी ज़्यादा होगी, वह क्षार उतना ही प्रबल होगा।

## सूचक: फिर एक बार

अम्ल और क्षार की इस नई परिभाषा के तहत अब हमारा सवाल यह हो जाता है कि क्या सारे सूचक pH 7 से कम वाले घोलों को अम्लीय और pH 7 से ज़्यादा वाले घोलों को क्षारीय बताते हैं। दूसरे शब्दों में, सवाल यह है कि क्या सभी सूचक pH 7 पर रंग बदलते हैं।

बदकिस्मती (या खुशकिस्मती) से ऐसा नहीं है। यहां प्रस्तुत चार्ट से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अलग-अलग सूचक अलग-अलग pH पर रंग बदलते हैं। मसलन, फिनॉफ्थेलीन pH 8 से ज़्यादा हो तो गुलाबी या लाल

होता है, pH 8 से कम हो तो रंगहीन हो जाता है। यानी pH 8 से कम वाले घोल को यह अम्लीय/उदासीन बताता है। ऐसे घोल (जिनका pH 8 से 7 के बीच है) मिथाइल ऑरेंज से जांचने पर क्षारीय नज़र आएंगे। इसके विपरीत कई घोल ऐसे भी होंगे (pH 1 से 7 के बीच) जिन्हें अम्लीय होते हुए भी मिथाइल ऑरेंज उन्हें क्षारीय/उदासीन बताएगा क्योंकि मिथाइल ऑरेंज pH 4 पर रंग बदलता है।

आखिर ये सारे सूचक pH 7 पर ही रंग क्यों नहीं बदलते? आइए कारण समझने की कोशिश करें।

मैंने पहले ही कहा था कि ये सब सूचक स्वयं दुर्बल अम्ल या दुर्बल क्षार हैं। इनका रंग इस बात पर निर्भर है कि घोल में ये आयनीकृत अवस्था में हैं या अन-आयनीकृत अवस्था में।

सरलता के लिए हम कह सकते हैं कि प्रत्येक सूचक का आयनीकरण एक विशिष्ट pH पर ही होता है। लिहाज़ा इसी pH पर जाकर वह सूचक रंग बदलेगा।

| सूचक | रंग में बदलाव | | | बदलाव का अंतराल (pH) |
|---|---|---|---|---|
| | अम्लीय | बदलाव के वक्त | क्षारीय | |
| मिथाइल वायोलेट | पीला | जलीय | नीला | 0.0–1.6 |
| मिथाइल येलो | लाल | ऑरेंज | पीला | 2.9–4.0 |
| ब्रोमोफिनॉल ब्लू | पीला | हरा | नीला | 3.0–4.6 |
| मिथाइल ऑरेंज | लाल | ऑरेंज | पीला | 3.2–4.4 |
| मिथाइल रेड | लाल | बफ्फ | पीला | 4.8–6.0 |
| लिटमस | लाल | गुलाबी | नीला | 5.5–8.0 |
| ब्रोमोथाइमोल ब्लू | पीला | हरा | नीला | 6.0–7.6 |
| फिनॉल रेड | पीला | ऑरेंज | लाल | 6.6–8.0 |
| फिनॉफ्थेलीन | रंगहीन | गुलाबी | लाल | 8.2–10.6 |
| थाइमोलफ्थेलीन | रंगहीन | पेल ब्लू | नीला | 9.4–10.6 |
| एलीज़ारीन येलो | पीला | ऑरेंज | लाल | 10.0–12.0 |

*अगले पृष्ठ पर pH पैमाने के बारे में दिया गया बॉक्स देखिए।*

# pH पैमाना

शुद्ध पानी का भी अल्प मात्रा में आयनीकरण होता है। इससे अत्यन्त अल्प मात्रा में $H^+$ व $OH^-$ आयन बनते हैं। ज़ाहिर है कि शुद्ध पानी में इनकी मात्रा बराबर-बराबर होगी। नियम यह है कि पानी (चाहे शुद्ध हो या मिलावटी) में $H^+$ व $OH^-$ आयनों की सांद्रता का गुणनफल स्थिर रहता है।

$$[H^+] \times [OH^-] = 10^{-11}$$

सांद्रताएं ग्राम-आयन प्रति लीटर के रूप में व्यक्त की जाती हैं। उक्त समीकरण का अर्थ हुआ कि शुद्ध पानी में

$[H^+] = [OH^-] = 10^{-7}$ ग्राम-आयन प्रति लीटर।

अब पानी में हम जब अम्ल या क्षार डालते हैं तो वे क्रमशः $H^+$ आयन या $OH^-$ आयन पैदा करते हैं।

मान लीजिए हमने अम्ल डाला है, तो पानी में $H^+$ आयन की सांद्रता बढ़ेगी। यदि $[H^+]$ और $[OH^-]$ का गुणनफल स्थिर रहना है तो उसी अनुपात में $OH^-$ की सांद्रता घटेगी।

यदि क्षार डालेंगे तो उसमें $OH^-$ की सांद्रता बढ़ेगी। तब गुणनफल को स्थिर रखने के लिए $H^+$ आयन की सांद्रता घटने लगेगी। लिहाज़ा यदि हमें किसी घोल में $H^+$ आयन की सांद्रता मालूम है, तो हम उपरोक्त समीकरण के द्वारा $OH^-$ आयन की सांद्रता ज्ञात कर सकते हैं। अतः किसी घोल की अम्लीयता और क्षारीयता दोनों को ही $H^+$ आयन सांद्रता के रूप में व्यक्त किया जा सकता है।

| $[H^+]$ | घोल की प्रकृति |
|---|---|
| $10^{-7}$ | उदासीन |
| $10^{-7}$ से ज़्यादा | अम्लीय |
| $10^{-7}$ से कम | क्षारीय |

$10^{-7}$ के रूप में व्यक्त करने की मुश्किलों को देखते हुए सन् 1909 में सोरेन्सन ने एक सरल पैमाना विकसित किया था। इसे pH पैमाना कहते हैं। उन्होंने बताया कि $H^+$ सान्द्रता का लॉगेरिद्म निकालकर उसे ऋणात्मक चिन्ह से प्रकट किया जाए; और इसे pH कहें:

$$pH = -\text{Log}\,[H^+]$$

जैसे अगर $[H^+] = 10^{-7}$ तो $pH = -\text{Log}\,[10^{-7}]$

$$= -(-7)$$

$$= 7$$

या $[H^+] = 10^{-1}$ तो $pH = -\text{Log}\,[10^{-4}]$

$$= -(-4)$$

$$= 4$$

या $[H^+] = 10^{-11}$ तो $pH = -\text{Log}\,[10^{-14}]$

$$= -(-14)$$

$$= 14$$

इसके अनुसार

$pH = 7$ तो घोल उदासीन

$pH > 7$ तो घोल क्षारीय

$pH < 7$ तो घोल अम्लीय

**सुशील जोशी:** एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम एवं स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। साथ ही स्वतंत्र विज्ञान लेखन एवं अनुवाद करते हैं।

# वर्नियर का सिद्धांत

विनोद कुमार गुप्ता

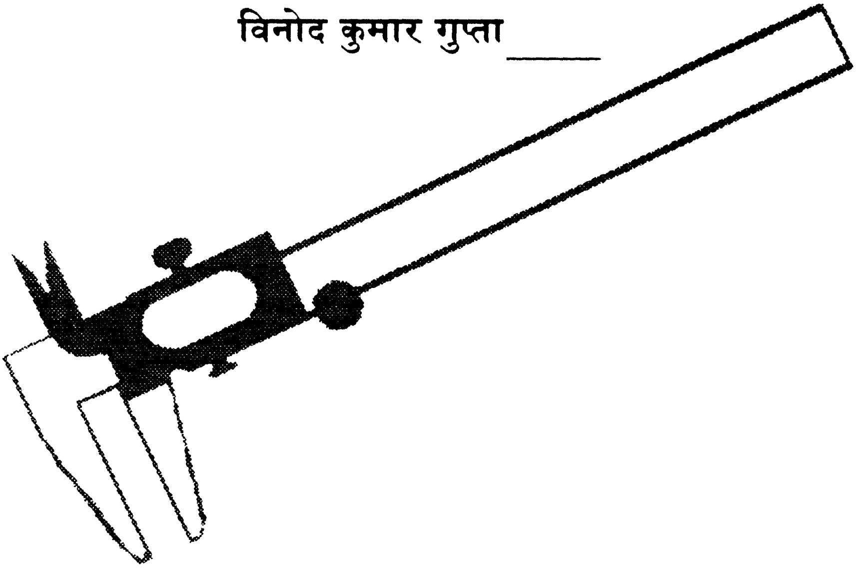

प्रचलित पाठ्य पुस्तकों में वर्नियर का सिद्धांत नहीं समझाया जाता है, केवल वर्नियर के अल्पतम माप का सूत्र व पाठ्यांक लेने की विधि का वर्णन भर कर दिया जाता है। वर्नियर की सहायता से सूक्ष्म पाठ्यांक आसानी से लेना किस प्रकार संभव हो पाता है यह जानना दो वजह से ज़रूरी है। एक तो उससे ही समझ में आ सकता है कि आखिर वर्नियर में अल्पतम माप का जो सूत्र इस्तेमाल किया जाता है वह कहां से आ टपकता है। और इसलिए भी क्योंकि वर्नियर की विधि सामान्य मापन से एकदम फर्क है और मज़ेदार भी। यही नहीं, वर्नियर की तरह का पैमाना और भी कई जगह इस्तेमाल किया जाता है इसलिए हमें मालूम तो हो कि यह आखिर काम कैसे करता है।

## वर्नियर का अल्पतम माप

वर्नियर का आविष्कार सन् 1930 में वैज्ञानिक पियरे वर्नियर ने किया था। इसकी सहायता से किसी भी पैमाने का अल्पतम माप प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है। सामान्यत: किसी पैमाने का अल्पतम माप उस पर खींचे दो पास-पास के किन्हीं चिन्हों के बीच का माप होता है। इन चिन्हों को और पास-पास लाकर अल्पतम माप कम

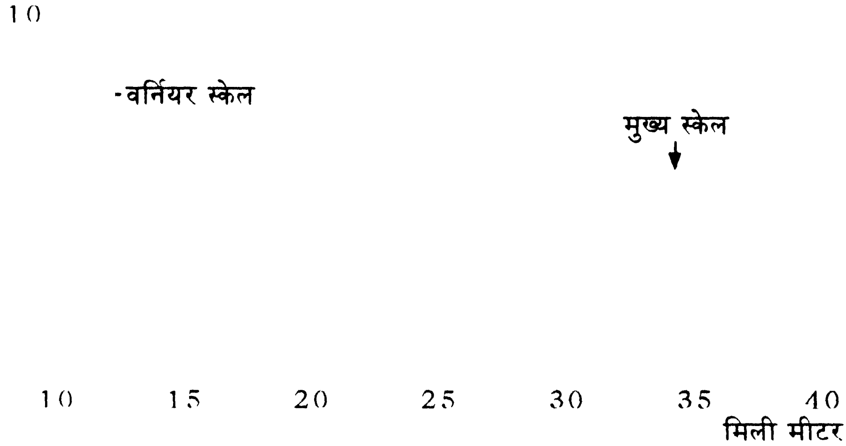


**चित्र–1** वर्नियर स्केल से अगर 1 मिलीमीटर के दसवें हिस्से तक नापना हो तो वर्नियर पैमाना इस तरह बनाना होगा कि उसके 10 खंड मुख्य पैमाने के 9 खंड के एकदम बराबर हों।

किया जा सकता है यानी मापन की बारीकी बढ़ाई जा सकती है। लेकिन ऐसा एक निश्चित सीमा तक ही संभव है। उसके पश्चात पास-पास के चिन्हों में अंतर कर पाना कठिन होता जाता है। वर्नियर पैमाना इस कठिनाई को कुछ हद तक दूर करता है।

वर्नियर पैमाना मुख्य पैमाने से जुड़ा हुआ एक छोटा पैमाना होता है, जिस पर समान दूरियों पर कुछ चिन्ह लगे होते हैं। इन चिन्हों की संख्या व इनके बीच की दूरी इस बात से निर्धारित होती है कि मुख्य पैमाने का अल्पतम माप, प्रभावी रूप से कितना कम करना है। वर्नियर पैमाना, मुख्य पैमाने पर आगे-पीछे सरकाया जा सकता है। वर्नियर का सर्वाधिक अधिक प्रचलित रूप वर्नियर कैलिपर्स है। चित्र-1 में इसी तरह का एक पैमाना दिखाया गया है। इसमें मुख्य पैमाने का अल्पतम माप 1 मिलीमीटर है। अब अगर हम 1 मिलीमीटर के दसवें हिस्से तक पाठ्यांक लेना चाहते हैं, तो वर्नियर पैमाने पर समान दूरियों पर 10 भाग इस प्रकार बनाए जाते हैं कि वे मुख्य पैमाने के 9 भागों यानी 9 मिलीमीटर के बराबर हों।

अर्थात वर्नियर के 10 भाग =

मुख्य पैमाने के 9 भाग यानी 9 मिमी

अत: वर्नियर के 1 भाग का मान =

0.9 मिलीमीटर

अब इस वर्नियर की कार्यविधि समझते हैं। जब वर्नियर कैलिपर्स के

जबड़ों के बीच कोई वस्तु न रखी हो तब मुख्य पैमाने का शून्य वर्नियर के शून्य के एकदम सामने होता है। शून्य त्रुटि न होने पर वर्नियर का दसवां चिन्ह मुख्य पैमाने के नवमें चिन्ह के सामने आ जाता है। इस अवस्था में मुख्य पैमाने के 1 भाग व वर्नियर पैमाने के 1 भाग के मान का अंतर इतना होगा:

1 मिमी − 0.9 मिमी = 0.1 मिमी

अत: यह स्पष्ट है कि वर्नियर का पहला चिन्ह मुख्य पैमाने के पहले चिन्ह मे 0.1 मिमी पहले आता है।

वर्नियर का दूसरा चिन्ह मुख्य पैमाने के दूसरे चिन्ह से 0.2 मिमी पहले आता है।

वर्नियर का दसवां चिन्ह मुख्य पैमाने के दसवें चिन्ह से 1 मिमी पहले आता है अर्थात यह मुख्य पैमाने के 9 मिमी के निशान के सामने आता है। इस तथ्य को चित्र-1 में दर्शाया गया है।

उपरोक्त विवरण एवं चित्र-1 से स्पष्ट है कि यदि जबड़ों के मध्य रखी वस्तु का आकार

0.1 मिलीमीटर हो तो −
वर्नियर 0.1 मिमी आगे सरकेगा व उसका पहला चिन्ह मुख्य पैमाने के पहले चिन्ह से संपाती होगा यानी सामने आएगा।

वस्तु का आकार 0.2 मिमी हो तो −
वर्नियर का दूसरा चिन्ह मुख्य पैमाने के दूसरे चिन्ह से संपाती होगा।

10

वर्नियर स्केल

मुख्य स्केल
(सेंटीमीटर में)

**चित्र−2** इस चित्र को देखकर पता लगाने की कोशिश कीजिए कि वर्नियर कैलिपर्स के जबड़ों के बीच फंसी वस्तु की नाप क्या होगी।

## अल्पतम माप का सूत्र

अगर गणित में आपकी रुचि हो तो आप सूत्र से भी पता कर सकते हैं कि दिए गए वर्नियर पैमाने का अल्पतम नाप क्या है; या फिर सूत्र से ही खोज सकते हैं कि किसी विशेष अल्पतम नाप का वर्नियर स्केल कैसा बनेगा।

मुख्य पैमाने के अल्पतम माप (मानो s) को जितने गुना कम करना हो, (मानो n गुना कम करना है) उतने भाग वर्नियर पर समान दूरियों पर हों तथा ये भाग मुख्य पैमाने के (n-1) भाग के बराबर हों, तो वर्नियर की सहायता से (s/n) तक नाप ली जा सकती है।

इस प्रकार वर्नियर के n भाग = मुख्य पैमाने के (n-1) भाग

अतः वर्नियर के 1 भाग का मान $= [(n-1)/n] \times s$

$$= (n-1)\, s/n$$

वर्नियर का अल्पतम माप =

= मुख्य पैमाने के 1 भाग का मान – वर्नियर के 1 भाग का मान

$$= s - \frac{(n-1)\, s}{n}$$

$$= s - \frac{ns}{n} + \frac{s}{n} = \frac{s}{n}$$

$$= \frac{\text{मुख्य पैमाने के 1 भाग का मान}}{\text{वर्नियर पर अंकित कुल भाग}}$$

$$\text{वर्नियर का अल्पतम नाप} = \frac{\text{मुख्य पैमाने का अल्पतम माप}}{\text{वर्नियर पर अंकित कुल भाग}}$$

इस तरह यह बात साफ हो जाती है कि इन दोनों तरीकों से वर्नियर के अल्पतम माप का सिद्धांत समझा जा सकता है।

---

वस्तु का आकार 0.9 मिमी हो तो वर्नियर का नौवां चिन्ह मुख्य पैमाने के नवें चिन्ह से संपाती होगा।

इस प्रकार 1 मिमी के दसवें हिस्से का पाठ आसानी से लिया जा सकता है।

उदाहरणार्थ यदि किसी वस्तु का आकार 4.55 सेंटीमीटर है और उसे वर्नियर कैलिपर्स के जबड़ों के बीच

फंसाया जाता है तो वर्नियर का शून्य मुख्य पैमाने के 4.5 व 4.6 सेमी के बीच आएगा; और वर्नियर का 5वां चिन्ह मुख्य पैमाने के किसी निशान की सीध में मिलेगा। (इस स्थिति में वह 5 सेमी के चिन्ह से संपाती होगा)। यहां ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि वर्नियर का कौन-सा चिन्ह मुख्य पैमाने के किसी भी निशान की एकदम सीध में आता है, यही महत्वपूर्ण है। यह बिल्कुल भी महत्वपूर्ण नहीं है कि वह मुख्य पैमाने के कौन-से चिन्ह की सीध में है।

इस प्रकार वर्नियर पैमाना लगाने पर पैमाने का प्रभावी अल्पतम माप

= मुख्य पैमाने के 1 भाग का मान – वर्नियर के 1 भाग का मान

= .1 मिमी–0.9 मिमी. = 0.1 मिमी.

इसी तरह अगर हमें एक ऐसा वर्नियर पैमाना बनाना हो जिससे 0.05 मिलीमीटर तक की दूरी नापी जा सके तो वर्नियर पैमाने को इस तरह बनाना होगा कि उसका प्रत्येक खंड मुख्य पैमाने के एक खंड से 0.05 मिलीमीटर कम हो। ऐसा तभी संभव है जब वर्नियर पैमाने के 20 खंड मुख्य पैमाने के 19 खंड के एकदम बराबर हों क्योंकि अगर वर्नियर पैमाने का प्रत्येक खंड 0.05 मिलीमीटर छोटा है तो वर्नियर पैमाने के 20 खंड मुख्य पैमाने से 0.05x 20 = 1 मिलीमीटर कम होंगे।

अब आप ही सोचिए कि अगर वर्नियर पैमाने से 0.01 मिलीमीटर तक की दूरी नापनी हो तो वर्नियर पैमाना कैसा चुनना होगा। सिद्धांततः संभव होते हुए भी इस पैमाने को बनाने में कौन-कौन-सी समस्याएं आएंगी; उन पर भी अगर आप गौर करेंगे तो आपको वर्नियर पैमाने की सीमाएं भी समझ में आने लगेंगी।

वर्नियर स्केल का उपयोग स्पेक्ट्रोमीटर व चल सूक्ष्मदर्शी इत्यादि यंत्रों में किया जाता है। जब भी मौका मिले उसमें इस्तेमाल किए गए वर्नियर पैमाने को पढ़ने की कोशिश ज़रूर कीजिए।

**विनोद कुमार गुप्ता:** रतलाम में कॉलेज में भौतिकी के सहायक प्राध्यापक हैं।

# डी. एन. ए.

# से प्रोटीन

## एक अनूठी यात्रा

**पूर्णिमा भार्गव**

अभिव्यक्ति हमारी पहचान है। कोई व्यक्ति अपने को किस तरह अभिव्यक्त करता है यह उसके व्यक्तिगत गुणों पर निर्भर करता है; और हमारे गुण इस बात पर निर्भर करते हैं कि हमारे जीन अपने को कैसे अभिव्यक्त करते हैं। क्या हैं ये जीन, इनकी अभिव्यक्ति कैसे हमारे गुण बदल सकती है? क्या यह अभिव्यक्ति नियंत्रित है, क्या हम इसे नियंत्रित कर सकते हैं? क्या यह अभिव्यक्ति सदैव वैसी ही होती है जैसा उसे होना चाहिए; या कभी-कभी यह मनमाने तरीके से चलकर कुछ बीमारियों आदि

को भी जन्म दे सकती है? ऐसी हालत में क्या ये बीमारियां सिर्फ संबंधित जीन्स के कान ऐंठकर ठीक की जा सकती हैं?

ऐसे ही तथा इससे संबंधित कुछ और प्रश्न हैं जो हमारे क्षेत्र में शोध करने वाले वैज्ञानिकों को परेशान करते हैं, लेकिन ये हमारे लिए प्रिय भी हैं। हमारे लिए हर जीन एक व्यक्ति के समान है। जिस तरह हर एक व्यक्ति की अपनी विशेषताएं होती हैं, हर जीन भी अपने-आप में अनूठी होती है। पर जैसा कि हम जानते हैं, सब व्यक्ति – स्त्री हो या पुरुष, मूलतः एक ही तरह के प्राणी हैं। ऐसे ही सभी जीन्स की संरचना में समानता है। तो आइए सबसे पहले देखें कि यह जीन आखिर क्या है?

## शुरुआत कोशिका से

सभी प्राणियों के शरीर कई छोटी-छोटी इकाइयों से मिलकर बने होते हैं। सबसे छोटी इकाई को कोशिका कहते हैं। जीवन एक अकेली कोशिका से शुरू होता है और इस कोशिका का आकार इतना छोटा होता है कि आप एक अकेली साधारण कोशिका को बिना किसी यंत्र की मदद के नहीं देख सकते। परन्तु फिर भी इस एक कोशिका में इतनी क्षमता और इतनी सारी आवश्यक सूचनाएं होती हैं कि वह अपने जैसी एक और कोशिका तैयार

**कोशिका विभाजन की तैयारी:** डी. एन. ए. की प्रतिकृति तैयार हो रही है ताकि नई कोशिका को भी बिल्कुल वैसा ही डी. एन. ए. का तंतु मिले।

कर सकती है। एक कोशिका से दो, फिर चार और फिर अनगिनत कोशिकाएं तैयार हो जाती हैं। इन सब में उस पहली कोशिका के गुण होते हैं। और कोशिका विभाजन के बाद बनने वाली इन सब कोशिकाओं की विशेषताएं तथा स्वरूप कैसे होने चाहिए, यह भी पहली कोशिका ही तय कर देती है। तो इस तरह चलती है कोशिका की यात्रा।

अगला प्रश्न आता है कि कैसे यह पहली कोशिका बाद वाली कोशिकाओं का स्वरूप तय कर देती है? नई कोशिका में ऐसा क्या है जो पुरानी कोशिका से अलग हो जाने पर भी उसे मातृ कोशिका के निर्देशों से बांधे रखता है? यह वही पदार्थ है जो हम सब के शोध का अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसकी खोज और पहचान ने हमारी समझ में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिए। जी हां, हमारा आनुवंशिकी पदार्थ यानी डी. एन. ए.। आज हम डी. एन. ए. की रासायनिक संरचना जानते हैं और उसे परखनली में बना सकते हैं। हम जानते और मानते हैं कि हर व्यक्ति की हर कोशिका में एक ही डी. एन. ए. है पर उसमें व्यक्तिगत विशेषताएं हैं।

## डी. एन. ए. की जमावट

कल्पना कीजिए कि डी. एन. ए. एक लंबे धागे जैसी रचना है और हर

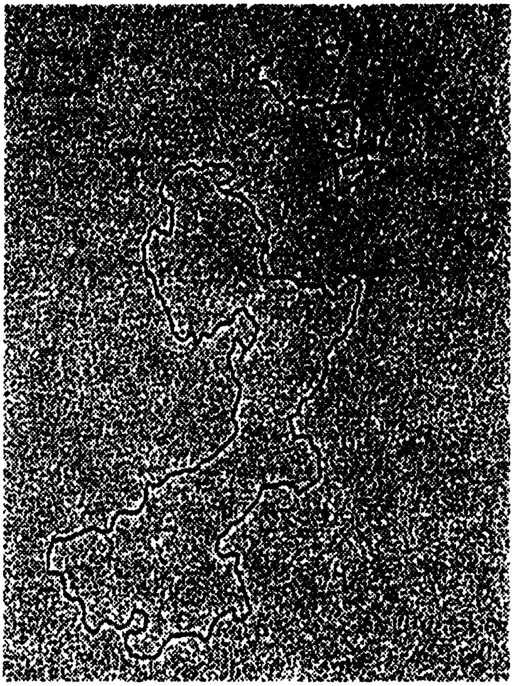

**डी. एन. ए. का तंतु: यह फोटो फेज** पी. एम-2, के डी. एन. ए. का है। इसमें डी. एन. ए. के धागे का सुलझा हुआ छल्ला दिख रहा है; चित्र में ऊपर की ओर लिपटे हुए सुपर कॉयल स्वरूप में डी. एन. ए. का तंतु भी दिख रहा है।

व्यक्ति एक धागा है, जो लंबाई में बराबर है। पर हर एक का रंग भिन्न है, अनगिनत लोग अनगिनत रंग के धागों से बने हुए – जितने भी रंगों और उनके शेड्स की आप कल्पना कर सकते हैं।

हमें मालूम है कि डी. एन. ए. कोशिका के अंदर पाया जाता है। जब कोशिका दो में विभक्त होती है तो वह बिलकुल अपने जैसा एक डी. एन. ए. बना कर नई कोशिका को देती है। मातृ कोशिका के सारे निर्देश और

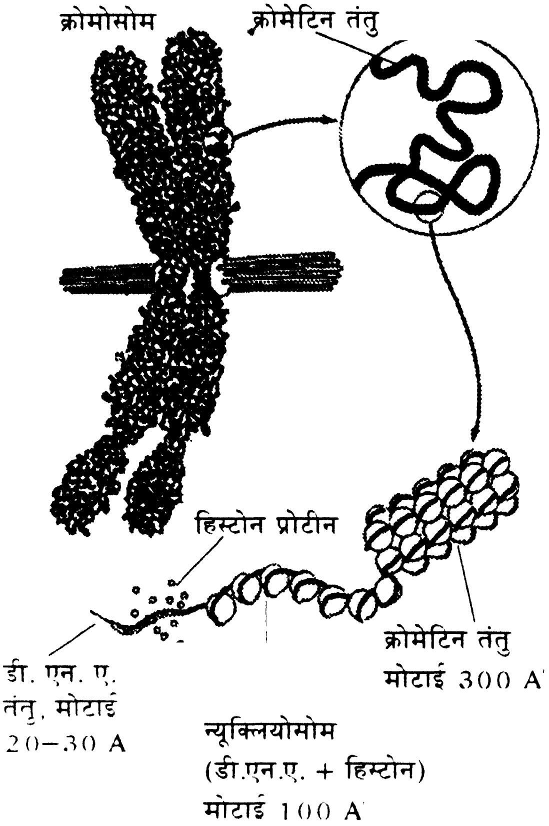


**डी. एन. ए. के तंतु की चरणबद्ध जमावट:** डी. एन. ए. के तंतु की मोटाई लगभग 20-30 A$^0$ (एंगस्ट्रॉम) होती है। पहले चरण में यह तंतु हिस्टोन प्रोटीन पर लिपटकर लगभग 100 A$^0$ की मोटाई के न्यूक्लियोसोम बनाता है। फिर न्यूक्लियोसोम की यह माला मुड़-मुड़कर तह लगाकर घना रूप ले लेती है जिसकी मोटाई लगभग 300 A$^0$ होती है; और अंत में इस क्रोमेटिन तंतु से जो रचना बनती है वही है क्रोमोसोम यानी रंगसूत्र। (1 एंगस्ट्रॉम यानी $10^{-10}$ मीटर या $10^{-}$ से. मी.)

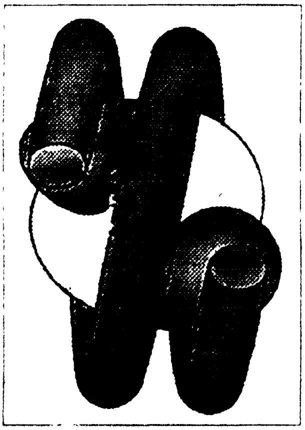

एक्स-रे न्यूट्रॉन-डिफरेक्शन अध्ययनों पर आधारित न्यूक्लियोसोम की एक परिकल्पना।

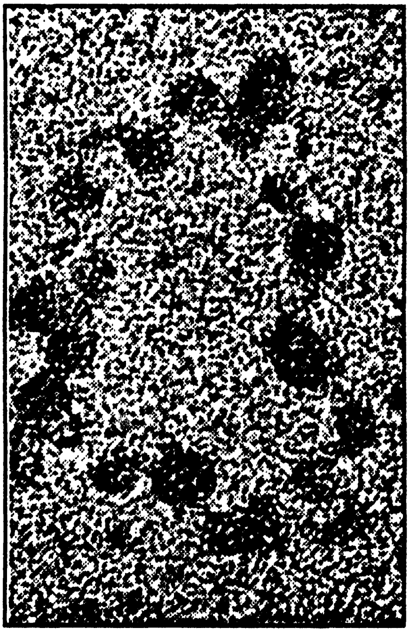

इस फोटो में न्यूक्लियोसोम की मोतीनुमा संरचना दिख रही है।

सूचनाएं इस तरह नई कोशिका को भी मिल जाते हैं। कोशिका के पास अपना सुविकसित तंत्र होता है जो डी. एन. ए. पर कोड में लिखे संदेशों को पढ़ सकता है।

मतलब पूरा का पूरा डी. एन. ए. का यह लंबा-सा धागा जो वास्तव में एक कोशिका से आकार में बहुत बड़ा होता है, इस तंत्र को आसानी से मिल जाना चाहिए। इसके लिए यह ज़रूरी है कि डी. एन. ए. बड़े ही सुचारू ढंग से कोशिका के अंदर जमा हुआ हो; नहीं तो जैसे धागा उलझ जाता है, डी. एन. ए. भी उसी तरह उलझ सकता है। और अगर डी. एन. ए. के इतने लंबे धागे को कोशिका तंत्र एक तरफ से पढ़ना शुरू करे तो अपने काम की जगह तक पहुंचने में परेशान हो जाएगा। लेकिन सब्र कीजिए, कोशिका के पास हर मुश्किल का जवाब है।

कुछ प्रोटीन उसके लिए अपनी सेवा प्रस्तुत करते हैं और अपनी पीठ पर डी. एन. ए. को संभाल कर, बिछाने का काम करते हैं। ये प्रोटीन बहुत ही छोटे-छोटे छर्रों जैसी गोलियों का रूप लेते हैं, जिनके ऊपर डी. एन. ए. बड़ी ही सफाई से लिपटता जाता है। एक के बाद एक – क्रम से खूब सारी गोलियां इस काम आती हैं। और यदि इस डी. एन. ए. को माइक्रोस्कोप से देखा जाए तो ऐसा लगता है जैसे एक माला के धागे में बहुत से मोती पिरोए हुए हैं।

इस माला में एक खासियत यह है कि ये गोलियां स्वतंत्र रूप से खोली या पिरोयी जा सकती हैं। एक वक्त में इसलिए केवल वही मोती टूटते हैं जहां के डी. एन. ए. को 'कोशिका तंत्र' पढ़ता है और उसी डी. एन. ए. का संदेश प्रसारित होता है।

इस माला की दूसरी खासियत यह होती है कि बहुत ही सलीके से यह मुड़-मुड़कर, तह लगाकर लंबाई में छोटा परन्तु घना स्वरूप ले लेती है। इन मालाओं के इस घने स्वरूप से जो रचना बनती है, वही हैं क्रोमोसोम।

## डी. एन. ए. की अभिव्यक्ति

अब जीन्स पर वापस आते हैं। एक लंबे डी. एन. ए. के धागे पर क्रम से बहुत से संदेश लिखे रहते हैं। 'जीन' डी. एन. ए. की वह एक पूरी लंबाई है जिससे एक पूरा संदेश मिलता है, और एक जीन में सिर्फ एक संदेश होता है। यह संदेश पढ़कर कोशिका इसके अनुसार संदेश को एक नया रूप देती है। यह नया संदेश एक प्रोटीन हो सकता है। इस तरह कोशिका डी. एन. ए. के संदेश का प्रोटीन के रूप में अनुवाद करके उसके अनुसार अपने वह काम करती है जिन्हें हम देखते और समझते हैं।

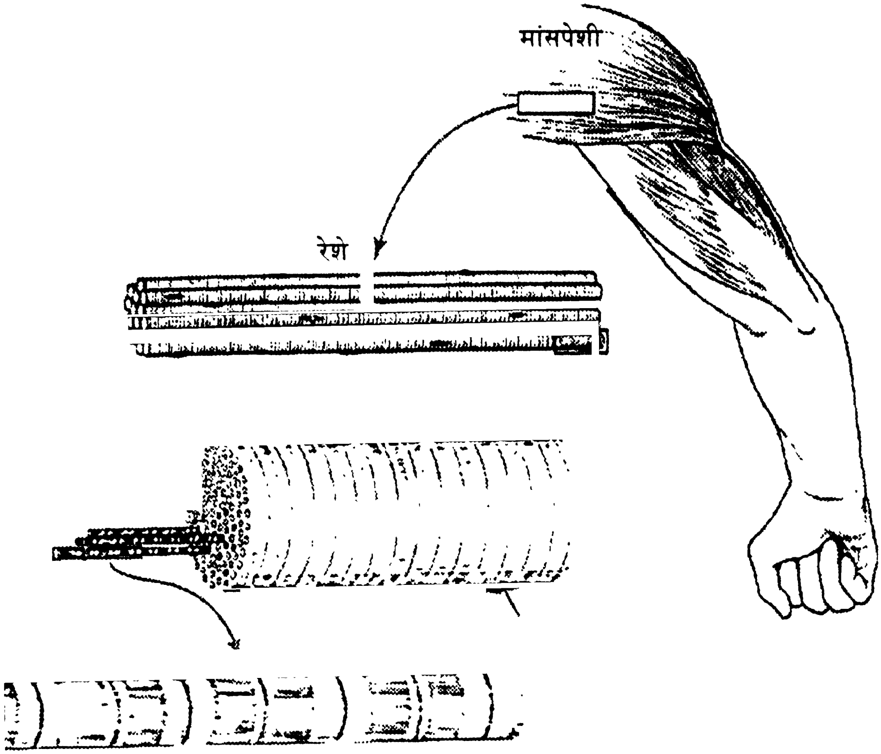


**मांसपेशियों की बनावट:** मांसपेशियों की कोशिकाओं में एक खास तरह के प्रोटीन बनते हैं जिनकी वजह से इन कोशिकाओं का समूह पेशी का आकार धारण करता है। ये खास प्रोटीन क्रम में सुसज्जित होकर बहुत बारीक रेशे बना पाते हैं। ऐसे प्रोटीन बनाने वाले जीन तो मनुष्य की प्रत्येक कोशिका में होते हैं परंतु ये जीन अपने आप को अभिव्यक्त केवल उन्हीं कोशिकाओं में करते हैं जिनमे मांसपेशियां बनती हैं।

आइए एक प्रक्रिया के उदाहरण से इसे समझने की कोशिश करें। हर कोशिका सांस लेती है और अपना जीवन चलाने के लिए ग्लुकोज़ से शक्ति प्राप्त करती है। ग्लुकोज़ से शक्ति पाने और सांस से ली हुई ऑक्सीजन का उपयोग करने की प्रक्रिया में, कई प्रोटीन ग्लुकोज़ को पकड़ कर उसे छोटे भागों (पानी और कार्बन-डाईआक्साइड) में तोड़ देते हैं और उसमें संचित ऊर्जा को उपयोगी रूप में जमा कर लेते हैं। इन प्रोटीन्स को बनाने वाली जीन हर कोशिका में मिलती है क्योंकि प्रत्येक कोशिका को खुद को जीवित रखने और अन्य काम करने के लिए ऊर्जा की ज़रूरत होती है।

दूसरी तरफ विशेष काम करने वाली कोशिकाओं में उनके अलावा कुछ विशेष तरह के प्रोटीन भी बनते हैं। इन विशेष प्रोटीन्स की जीन भी हर

कोशिका में मिलती हैं पर अपने को वे सिर्फ इन्हीं विशेष कोशिकाओं में अभिव्यक्त करती हैं।

उदाहरण के लिए मांसपेशियों की कोशिकाओं में एक खास तरह के प्रोटीन बनते हैं जिनकी वजह से इन कोशिकाओं का समूह पेशी का आकार धारण करता है; जिनमें ये प्रोटीन क्रम में सुसज्जित होकर बहुत सूक्ष्म रेशे बना पाते हैं। इन रेशों में संकुचन और फैलाव होने के कारण मांसपेशियां काम करती हैं। इन प्रोटीन्स को बनाने वाली जीन्स भी प्रत्येक कोशिका में होती हैं परंतु वे अपने आपको केवल उन्हीं कोशिकाओं में अभिव्यक्त करती हैं जिनमे मांसपेशियां बनती हैं।

## जीवन नियंत्रण

इस तरह हम देखते हैं कि जीन्स और उनसे बनने वाले प्रोटीन जीवन की सभी क्रियाओं को चलाने के लिए काम करते हैं। इनमें से किसी में भी, कोई एक भी छोटी-सी कमी या नुक्स होने पर गहरी समस्याएं, विकृतियों या विकारों के रूप में उभर सकती हैं। इन समस्याओं का हल ढूंढा जा सकता है, यदि हम इन प्रोटीन या जीन की संरचना समझ सकें। और जीन से प्रोटीन बनने की जटिल प्रक्रिया, जो कई चरणों में पूरी होती है, उसे भली भांति समझ सकें।

हमारे शोध समूह में हम इन्हीं जटिल प्रक्रियाओं को समझने की कोशिश में लगे हैं। हम डी. एन. ए. को उसके मोतियों में पिरोकर, परखनली में कोशिका जैसी स्थिति बनाकर देखने की कोशिश करते हैं कि ऐसी अवस्था में कोई जीन अपने आपको अभिव्यक्त करना चाहे तो उसको पहले स्तर पर कौन-सी बाधाओं का सामना करना पड़ता है; और वह कैसे इन बाधाओं को दूर कर सकता है। यदि इस प्रक्रिया को विस्तार से समझा जा सके तो एक दूसरा महत्वपूर्ण पहलू भी देखा जा सकता है। कभी-कभी कोई जीन किसी गलत कोशिका में गलत वक्त पर अपने को अभिव्यक्त करने लगती है। ऐसी दशा में उस जीन को फिर से शांत करना संभव हो सकता है यदि हमें मालूम हो कि वह कौन-से नियंत्रण हैं जो एक जीन की अभिव्यक्ति को रोककर रखते हैं।

**पूर्णिमा भार्गव:** सेंटर फॉर सेल्युलर एंड मोलेक्युलर बायॉलोजी, हैदराबाद में शोध कर रही हैं।

*यह लेख कोशिकीय एवं आणविक जीव विज्ञान केन्द्र, भारतीय रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान एवं राष्ट्रीय भूभौतिकीय अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद द्वारा आयोजित 'विज्ञान, साहित्य समागम' कार्यशाला के दौरान दिए गए व्याख्यान पर आधारित है।*

*'विज्ञान, साहित्य समागम' से साभार।*

## ज़रा सिर तो खुजलाइए

# मोटी पिन किसलिए

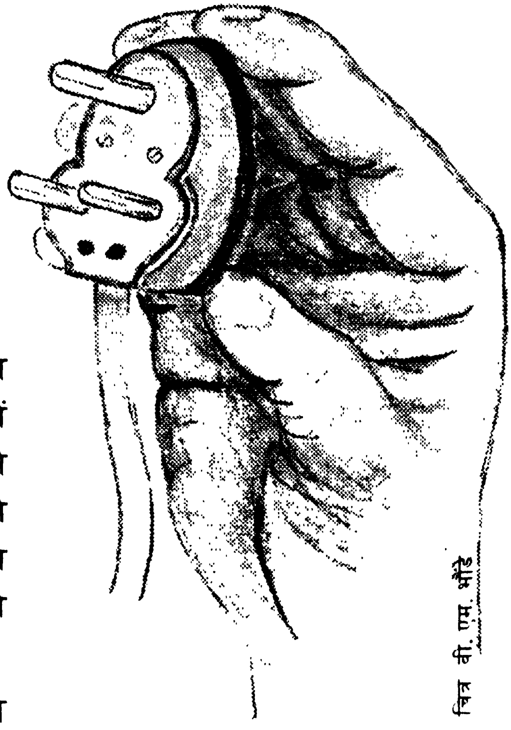

पिछले अंक में आपसे एक सवाल पूछा गया था कि आमतौर पर बिजली के उपकरणों में तीन पिन वाले प्लग लगे होते हैं। इनमें से एक पिन बाकी दो पिन से मोटी होती है जिसे अर्थिंग पिन कहा जाता है। आपको बताना था कि अर्थिंग पिन बाकी दो पिन के मुकाबले मोटी क्यों होती है?

इस सवाल के सही मिले जवाबों में से दो जवाब हम यहां दे रहे हैं।

**जवाब-1 :** विद्युत प्लग में तीन पिन में से दो पिन छोटी व तीसरी (अर्थिंग पिन) लंबाई में बड़ी व मोटी होती है, अर्थिंग पिन के मुख्य कार्य हैं–

*1. विद्युत उपकरण को भूसंपर्कित कर देना।*

*2. प्लग को स्विच बोर्ड में ठीक प्रकार से बिठा देना।*

तीसरी पिन लंबी बनाने से उपकरण का बाह्य आवरण सर्वप्रथम पृथ्वी से जुड़ जाता है, इसके बाद प्लग को और अधिक दबाने पर अन्य दो पिनों का संपर्क फेज़ व उदासीन तारों से होता है। यदि अर्थिंग पिन छोटी व फेज़ पिन लंबी होती तो विद्युत पहले उपकरण में पहुंचती तथा बाद में उपकरण भूसंपर्कित होता, इससे विद्युत आघात लगने की पूर्ण संभावना रहती है।

तीसरी पिन भूसंपर्क अच्छा करने के लिए मोटी बनाई जाती है, इससे प्लग स्विच बोर्ड में अच्छी तरह फिट बैठ जाती है और स्विच बोर्ड में बिल्कुल हिल-डुल नहीं सकती है।

अर्थिंग पिन मोटी होने से पिन का संपर्क ज़्यादा क्षेत्र में व मज़बूत होता है जिससे यदि उपकरण की बॉडी में विद्युत आ जाए तो वह पूर्ण रूपेण विद्युत

को पृथ्वी में भेजने में समर्थ होती है और विद्युत झटका लगने की संभावना समाप्त हो जाती है।

*– दीपक सोंधिया, उमरिया, म. प्र.*

**जवाब-2:** मेरे पिताजी संदर्भ पत्रिका के नियमित पाठक हैं, जिसकी वजह से यह पत्रिका हमारे घर में नियमित रूप से आती है। इस तरह से मुझे भी इस पत्रिका के कई लेख पढ़ने का अवसर मिलता है, जो कि मेरे स्तर के होते हैं। कई लेख तो मुझे बहुत ही रोचक लगते हैं; जिसमें 'ज़रा सिर खुजलाइए' के सवाल वास्तव में मेरे लिए सिर खुजलाने वाले होते हैं। संदर्भ के अंक-30 में पूछे जाने वाले सवाल को पढ़कर तो मैं खुशी से उछल गई क्योंकि यह तो वही सवाल था, जिसके बारे में हमारे विज्ञान के शिक्षक ने कक्षा में बताया था। इसलिए इसका जवाब तो मुझे आता ही था। इसलिए मैं फौरन इसका जवाब लिखने बैठ गई। जो इस प्रकार है–

अर्थिंग पिन से जुड़ी हुई तार का दूसरा सिरा उपकरण की बॉडी के संपर्क में रहता है, जिससे अगर किसी वजह से विद्युत धारा लीक होकर उसकी बॉडी में आ रही हो तो इस अर्थिंग तार की सहायता से हमें कोई हानि पहुंचाए बिना अर्थिंग पिन से होती हुई ज़मीन में चली जाएगी। अब कहीं गलती से भी अगर अर्थिंग वाला पिन हम प्लग के दूसरे छेद में डाल दें तो विद्युत धारा उपकरण की बॉडी में बहने लगेगी जो कि बहुत खतरनाक होगी। इसी दुर्घटना को रोकने के लिए अर्थिंग वाला पिन मोटा बनाते हैं ताकि वो पिन अनजाने में भी अन्य दो छिद्रों में, जिनमें विद्युत धारा आती है, न घुस सके।

इस अंक में इसके अतिरिक्त मुझे 'हवा का दबाव', 'चुंबक का इतिहास', 'पौधों में भोजन' आदि लेख भी बहुत अच्छे लगे। जैसे-जैसे मैं बड़ी कक्षा में आती जाऊंगी, मैं समझती हूं संदर्भ के और लेख भी मुझे समझ में आने लगेंगे।

*– तनुश्री भटनागर, जयपुर, राजस्थान*

**इस बार का सवाल:** सोलह भुजाओं से बनी है यह आकृति। आपको चार भुजाएं इस तरह मिटानी हैं कि केवल चार एक समान त्रिकोण ही बचने चाहिएं – और कुछ भी नहीं। अधिकतम समय सीमा – पांच मिनट।

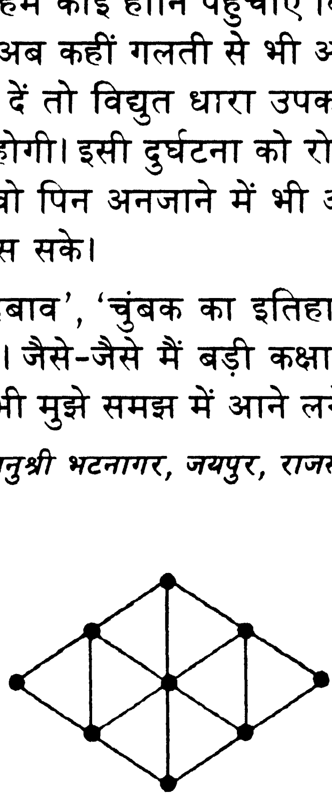

# कैसे भेज रहे हैं पैसा आप?

सदस्यता शुल्क आप मनीऑर्डर, ड्राफ्ट, चैक आदि से भेज सकते हैं। लेकिन –

1. अगर ड्राफ्ट – स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, सेंट्रल बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, स्टेट बैंक ऑफ इंदौर, केनरा बैंक से बनवा रहें हों तो एकलव्य के नाम से **होशंगाबाद पर देय** बनवाएं। इनपर कोई अतिरिक्त सर्विस चार्ज नहीं लगता क्योंकि इनकी शाखाएं होशंगाबाद में हैं।

   अगर किसी भी अन्य बैंक – जैसे इलाहाबाद, यूनियन बैंक आदि से बनवा रहें हों तो एकलव्य के नाम से, लेकिन **भोपाल पर देय बनवाएं।** क्योंकि होशंगाबाद में इनकी शाखा नहीं है इसलिए सर्विस चार्ज के रूप में 25 रुपए कट जाते हैं। अगर किसी ने 50 रुपए का ड्राफ्ट भेजा है तो उसमें से हम तक सिर्फ 25 रुपए ही पहुंच पाते हैं।

2. अब सदस्यता शुल्क **चैक से भी भेजा जा सकता है**। सदस्यता शुल्क के साथ **27 रुपए बैंक सर्विस चार्ज** के अतिरिक्त जोड़ें। बैंक कलेक्शन व पोस्टेज चार्ज के लिए इतने रुपए हर चैक से काट लेती है।

3. वैसे **सबसे बेहतर तरीका मनीऑर्डर है**। इसमें न तो बैंक में समय खपाने की ज़रूरत है और न ही सर्विस चार्ज की दिक्कत। परन्तु मनीऑर्डर के संदेश वाले हिस्से में अपना स्पष्ट पता ज़रूर लिखें।

4. आखिर में, विशेष ध्यान रखें कि ड्राफ्ट एकलव्य के नाम से बना हो, संदर्भ के नाम पर नहीं।

सदस्यता शुल्क इस पते पर भेजें।

**संदर्भ**
**द्वारा एकलव्य**
**कोठी बाज़ार**
**होशंगाबाद 461 001**

**संदर्भ**
**द्वारा एकलव्य**
**ई-1/25, अरेरा कॉलोनी**
**भोपाल 462 016**

# सावन का महीना, इंद्रधनुष और कुछ विज्ञान

प्रदीप गोठोस्कर

एक मराठी कवि अपनी कविता में सावन के महीने के बारे में लिखते हैं:

सावन में मन हर्षाया
 चारों ओर हरियाली छाई
  पल भर में होती बौछारें
   पलभर में धूप खिल आई।

सावन के महीने में बादलों और धूप की लुका-छिपी के बीच इन्द्रधनुष दिखाई देने के बारे में कवि आगे कहते हैं:

ऊपर देखो इन्द्रधनुष को
 मानो नभ मंडल में
  बांध दिया हो मंगल तोरण

एक बार इन्द्रधनुष दिखाई देने लगे तो क्या बड़े, क्या छोटे, सभी लोग अपने-अपने काम भूलकर आसमान में टकटकी लगाकर देखने लगते हैं।

कुदरत के इस अद्भुत नज़ारे को देखने के लिए सभी उत्सुक रहते हैं।

इस इन्द्रधनुष का जितना करीबी रिश्ता विज्ञान से है उतना ही घनिष्ट संबंध विविध कलाओं से भी है। सात रंगों वाले इस धनुष ने कई कवियों और चित्रकारों को प्रेरणा दी है। इस धरती पर मौजूद लगभग सभी प्राचीन संस्कृतियों, पौराणिक गाथाओं, दंत-कथाओं में इन्द्रधनुष का ज़िक्र मिलता है। लेकिन यह भी एक मज़ेदार तथ्य है कि इन्द्रधनुष का ज़िक्र शुभ घटनाओं के संदर्भ में ही किया जाता है। शायद इन्द्रधनुष है ही इतना खूबसूरत कि किसी का भी मन उल्लास से भर जाए।

वैसे इन्द्रधनुष के बनने के रहस्य का पता लगाने में वैज्ञानिकों को सैकड़ों साल लग गए। कई नामी-गिरामी वैज्ञानिकों ने इस रहस्य को जानने की कोशिशें कीं। आपको यह जानकर अचरज होगा कि इन्द्रधनुष के कुछ गुणधर्मों की जानकारी 20 वीं शताब्दी में ही मिली है। प्रकाश के जो दो रूप हैं – कण और तरंग – इनका असर यहां भी देखने को मिलेगा यह किसने सोचा था!

## सात रंगों की छटा

इन्द्रधनुष से जुड़े काफी सारे प्रकाशीय गुणधर्म हम सहजता से समझ सकते हैं। यदि आपको कभी इन्द्रधनुष देखने का मौका मिले तो थोडा ध्यान से देखिए। जिसे हम इन्द्रधनुष कहते हैं वह वास्तव में प्राथमिक इन्द्रधनुष है। प्राथमिक इन्द्रधनुष में सबसे अंदर की ओर बैंगनी रंग होता है और बाहर की ओर लाल रंग। इन्द्रधनुष में लाल, नारंगी, पीले, हरे, नीले, गहरे नीले और बैंगनी रंग की पट्टियां कमान की तरह तनी हुई दिखाई देती हैं। आमतौर पर इन्द्रधनुष सूर्य के विपरीत दिशा में दिखाई देता है और अक्सर सुबह या शाम के समय। कभी-कभी इन्द्रधनुष एकदम चटक होता है तो कभी काफी फीका। और तो और, कभी-कभी तो दो इन्द्रधनुष साथ-साथ दिखाई देते हैं। और इस दूसरे इन्द्रधनुष में अन्दर से बाहर रंगों का क्रम भी प्राथमिक इन्द्रधनुष से एकदम विपरीत होता है।

इस द्वितीय इन्द्रधनुष में सबसे भीतर की ओर लाल रंग होता है तो सबसे बाहर बैंगनी रंग। यदि कभी आपको प्राथमिक और द्वितीय इन्द्रधनुष देखने का मौका मिले तो आप और भी कई रोचक तथ्य देख सकेगें। जैसे प्राथमिक इन्द्रधनुष के भीतर का आकाश काफी चमकदार और रोशन होता है जबकि द्वितीय इन्द्रधनुष के भीतर का आकाश थोड़ा अंधेरा लिए होता है। इस अंधेरी पट्टी को 'अलेक्ज़ेंडर बैंड या पट्टा' कहते हैं। जब इन्द्रधनुष काफी चमकदार हो तब प्राथमिक इन्द्रधनुष के भीतरी हिस्से

में और द्वितीय इन्द्रधनुष के बाहरी हिस्सों में गुलाबी हरे पट्टे (बैंड्स) नज़र आते हैं। हो सकता है आपने तस्वीरों में काफी इन्द्रधनुष देखे हों, लेकिन आंखों से आसमान में इन्द्रधनुष देखने का मज़ा ही कुछ और है, खासतौर पर अगर दो इंद्रधनुष एक साथ दिखाई दे रहे हों।

## इन्द्रधनुष इतिहास के आइने में

इन्द्रधनुष के संबंध में प्रसिद्ध दर्शनशास्त्री अरिस्टॉटल (ई.पू. 384 से 322 ई.पू.) ने पहली बार कोई वैज्ञानिक अवधारणा देने की कोशिश की थी ऐसा मालूम पड़ता है। पहली बार उसने पहचाना कि बारिश, धूप और इन्द्रधनुष में कोई करीबी रिश्ता है। उसने बताया कि सूरज की रोशनी जब बादलों पर पड़ती है तो वह एक खास कोण से परावर्तित होती है जिसकी वजह से ज़मीन पर खड़े व्यक्ति को आसमान में गोलाकार इन्द्रधनुष होने का अहसास होता है। यानी यदि सभी किरणें सूरज से एक समान कोण बनाती हुई परावर्तित होती हैं तो आकाश में उस कोण के बराबर गोलाकार इन्द्रधनुष दिखाई देगा। साथ दिए चित्र में अरिस्टॉटल की परिकल्पना को दिखाया गया है।

अरिस्टॉटल के बाद लगभग 500 सालों बाद इन्द्रधनुष का ज़िक्र 'अलेक्ज़ेंडर ऑफ अफ्रोडिसियस' नामक वैज्ञानिक ने किया। उसने बताया कि प्राथमिक तथा द्वितीय इन्द्रधनुष के बीच का आसमान (बाकी आसमान की तुलना में) कालिमा लिए होता है। आज इस कालिमा लिए भाग को उसी के नाम पर 'अलेक्ज़ेंडर बैंड' के नाम से जाना जाता है। अलेक्ज़ेंडर के बाद करीब हज़ार साल बाद रोजर बेकन ने इन्द्रधनुष से जुड़ी गणनाएं कीं, ऐसा ऐतिहासिक स्रोत बताते हैं। बेकन के अनुसार (सन् 1266) प्राथमिक इन्द्रधनुष की कमान सूरज की किरणों से 42 डिग्री का कोण बनाती है। और द्वितीय इन्द्रधनुष की कमान सूर्य किरणों से 8 डिग्री ज़्यादा यानी 51 डिग्री का कोण बनाती है। यदि आपको कभी आसमान में इन्द्रधनुष दिखाई दे तो आप भी एक स्केल और चांदे की मदद से इन कोणों को नाप सकते हैं। बेकन

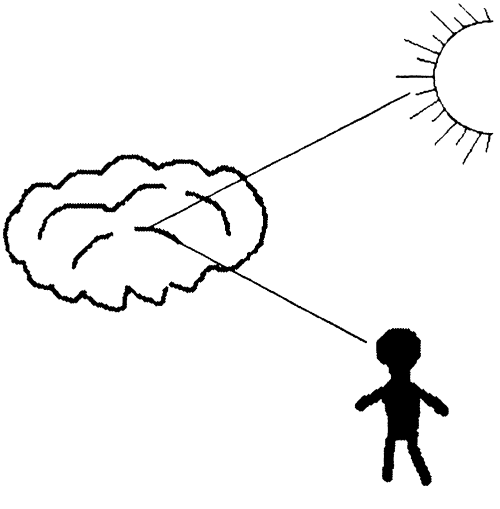

**चित्र:1** अरिस्टॉटल की इंद्रधनुष के बारे में परिकल्पना।

ने यह भी बताया कि प्राथमिक इन्द्रधनुष की तुलना में द्वितीय इन्द्रधनुष में रंगों का क्रम उल्टा होता है।

लेकिन ये रंग किस तरह बनते हैं, इनका क्रम उल्टा कैसे बनता है जैसे कई सवालों के जवाब अरिस्टॉटल के सिद्धांत से समझ पाना संभव नहीं है। सच बात तो यह है अरिस्टॉटल की यह धारणा कि 'इन्द्रधनुष प्रकाश के परावर्तन से बनता है' ही गलत थी। आज हम इस बात को बखूबी जानते हैं कि आइने में दिखने वाला अक्स हुबहू होता है लेकिन उल्टा होता है यानी बायां हिस्सा दाहिनी ओर दिखता है। और आइने के सामने कुछ लिखा हुआ रखा जाए तो वह भी एकदम ही उल्टा दिखता है। आइना प्रकाश किरणों को परावर्तित करता है तब एक सीधा सिद्धांत अपनाता है – कोई भी प्रकाश किरण शीशे के साथ जितने डिग्री का कोण बनाती हुई टकराती है शीशा उस किरण को उतना ही कोण बनाता हुआ परावर्तित करता है। चित्र में आइने से टकराने वाली प्रकाश किरण आइने के साथ 60 डिग्री का कोण बना रही है, और परावर्तन के बाद भी 60 डिग्री का कोण बना रही है। यदि आप चाहें तो कमरे में आइने और टॉर्च की मदद से इस प्रयोग को करके देख सकते हैं। सिर्फ इस बात का ध्यान रखना होगा कि कमरे में पर्याप्त अंधेरा हो। यानी सूरज की किरणें जब बादलों पर अलग-अलग कोण बनाती हुई टकराती हैं तो वे अलग-अलग कोण बनाती हुई परावर्तित होती हैं। फिर उनसे सिर्फ 42 डिग्री पर ही इन्द्रधनुष किस तरह बन पाता होगा? निश्चय ही अरिस्टॉटल की परावर्तन की परिकल्पना अधूरी थी।

विज्ञान एवं दर्शन के क्षेत्र में

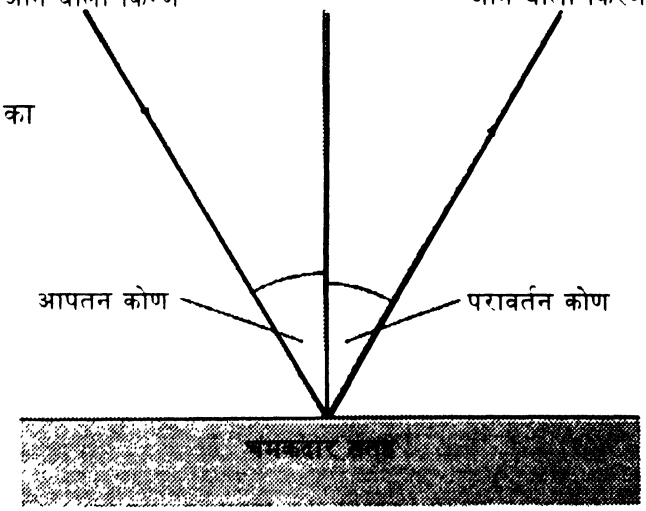


**चित्र:2** परावर्तन का सिद्धांत

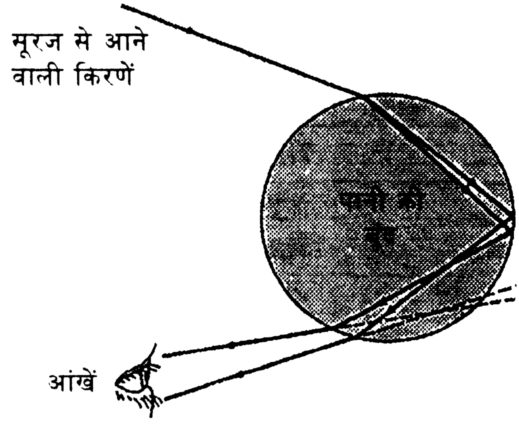


चित्र:3 पानी की गोलाकर बूंद से प्राथमिक इन्द्रधनुष का बनना।

अरिस्टॉटल के विचारों का ऐसा प्रभाव था कि उसकी परिकल्पना को लगभग 1800 साल तक चुनौती नहीं दी जा सकी। सन् 1304 में जर्मन धर्म गुरु 'थियोडोरिक ऑफ फ्रायवर्ग' ने इन्द्रधनुष को लेकर एक नई परिकल्पना पेश की। सूर्य की किरणें जब पानी की बूंदों मे अपवर्तित होती हैं तो एक खास कोण बनाती हुई बाहर निकलती हैं जिसकी वजह से इन्द्रधनुष बनता है। थियोडोरिक ने सिर्फ कल्पना ही पेश नहीं की बल्कि उसने इसे साबित करने के लिए अपने स्कूल के मैदान में कांच के गोल बर्तन में पानी भरकर उसे धूप में रखा। ऐसा करने पर उसने देखा कि सूरज की किरणें सिर्फ परावर्तित ही नहीं होती बल्कि पानी में घुसकर अपवर्तित भी होती हैं और रंगीन किरणों में तब्दील होती हैं। उसने यह भी पाया कि अपवर्तन के बाद ये किरणें एक खास दिशा में पानी से बाहर निकलती हैं। (यह प्रयोग आप भी करके देख सकते हैं – अगले पेज पर दिया गया बॉक्स देखिए)। थियोडोरिक के अनुसार (बादलों में) पानी की हरेक बूंद गोल कांच के बर्तन में रखे पानी की तरह प्रकाश किरणों का अपवर्तन करती है। इस सिद्धांत से दो बातें साफ हुईं।

1. इन्द्रधनुष की कमान प्रकाश किरणों के साथ एक निश्चित कोण बनाती है क्योंकि बूंदें गोलाकार होने के कारण सूरज से इस कोण पर आने वाली किरणें अपवर्तित होकर पानी की बूंद में घुस पाती हैं। शेष सब किरणें बूंद की सतहों से ही परावर्तित हो जाती हैं।
2. अपवर्तन की वजह से ही इन्द्रधनुष में रंगों का निर्माण होता है।

लेकिन दुर्भाग्य से थियोडोरिक की मौत के बाद उसकी परिकल्पना और प्रयोगों पर परदा पड़ गया। लगभग 300 साल बाद उसी परिकल्पना की

खोज एक बार फिर रेने देकार्त ने की। विज्ञान की प्रगति का इतिहास काफी विचित्रता लिए हुए है।

## जब स्पष्ट समझ बनने लगी

रेने देकार्त (सन् 1668-1744) गणित के विविध सिद्धांतों की खोज के लिए प्रसिद्ध था। अपवर्तन से जुड़े प्रकाश के गुणधर्मों की जांच करके देकार्त ने इन्द्रधनुष से जुड़े कुछ सवालों के जवाब खोज निकाले। उसने कांच के (पानी भरे) गोल बर्तन में प्रकाश किरणों के आने-जाने के रास्ते की जांच की। प्रकाश किरण जहां से गोलाकार बर्तन में प्रवेश करती है वहां अपवर्तित होती है, फिर बर्तन के पिछले हिस्से से टकराकर परावर्तित होती है; और फिर से पानी में से होती हुए कांच के बर्तन से बाहर निकलते हुए अपवर्तित होती है। ऐसी स्थिति में वे एक खास दिशा में बाहर निकलती हैं। यदि प्रकाश किरणें पानी की बूंद में दो बार परावर्तित हो जाएं तो किरणें किसी और दिशा में

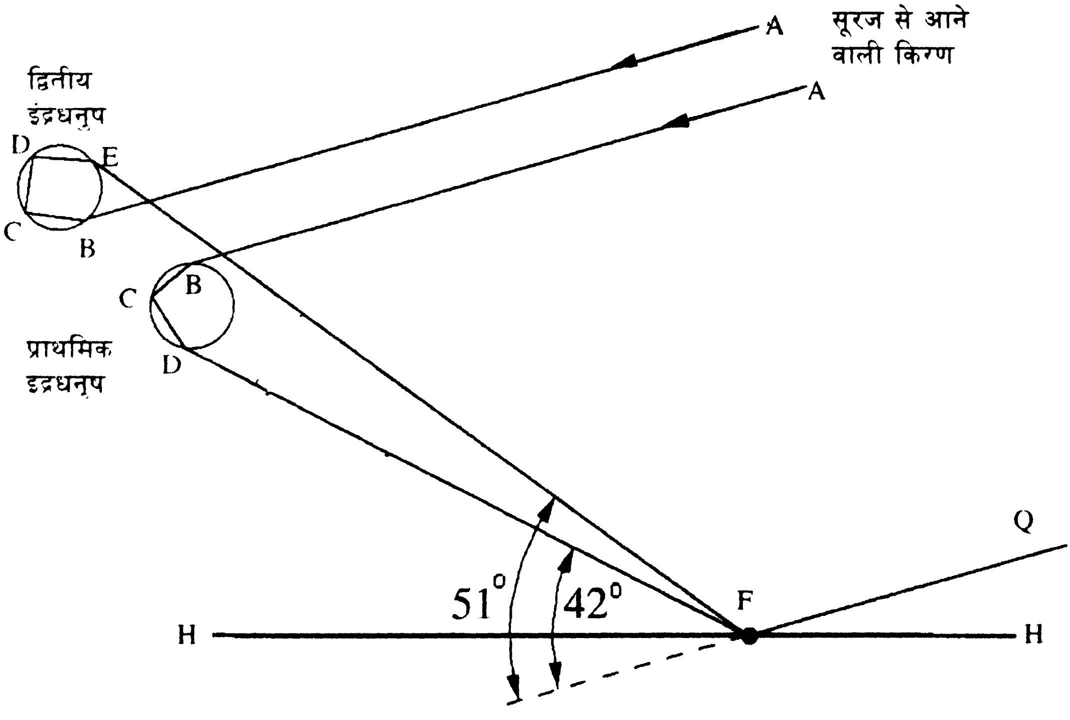


**प्राथमिक तथा द्वितीय इंद्रधनुष:** बारिश के दिनों में पानी की बूंदों में चित्र के अनुसार एक बार परावर्तित होने वाली किरणें प्राथमिक इंद्रधनुष बनाती हैं और दो बार परावर्तित होने वाली किरणें द्वितीय इंद्रधनुष। चित्र में दर्शक बिन्दु 'एफ' पर स्थित है। H H' क्षितिज है। सूर्य, पानी की बूंद और दर्शक के बीच के कोण को नापने के लिए सूर्य की किरणों के समांतर रेखा PQ बनाई गई है।

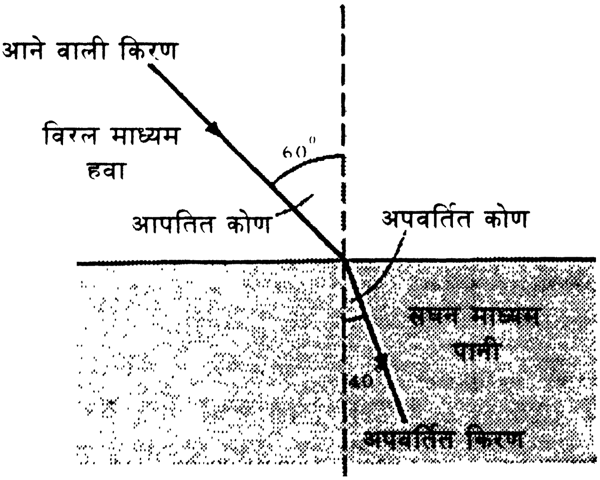


**चित्र**:4 प्रकाश का एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाने पर अपवर्तन।

अपवर्तित होकर निकल जाती हैं।

सामने दिए चित्र में प्राथमिक और द्वितीय इंद्रधनुष बनने की प्रक्रिया को दिखाया गया है। चित्र में A B C D F किरणों की वजह से प्राथमिक इंद्रधनुष बन रहा है। ए बी और डी एफ किरणों के बीच 42 डिग्री का कोण बन रहा है। यदि किरणें बूंद में दो बार परावर्तित हो जाए तो A B C D E F दिशा में चली जाती हैं। इन किरणों की वजह से लगभग 51 डिग्री पर द्वितीय इंद्रधनुष बनता है।

देकार्त के अनुसार द्वितीय इंद्रधनुष बनने के लिए किरणों को दो बार अपवर्तन और दो बार परावर्तन की प्रक्रिया से गुज़रना पड़ता है, हरेक अपवर्तन और परावर्तन के दौरान किरणें कमज़ोर होती जाती हैं, फलस्वरूप द्वितीय इंद्रधनुष काफी फीका दिखाई देता है। अब तक यह बात साफतौर पर समझी जा चुकी थी कि इंद्रधनुष का बनना परावर्तन, अपवर्तन और पानी की बूंदों के गोल होने से जुड़ा है। विज्ञान का इतिहास कितनी ही विचित्रता लिए हुए हो फिर भी यह तो तय है कि कल्पना की प्रत्येक उड़ान के बाद इंद्रधनुष के बारे में कुछ-न-कुछ नई जानकारियां मिलती गईं और कुछ समस्याओं के हल भी।

## अपवर्तन यानी क्या

देकार्त के सिद्धांत से दो सवाल उठ खड़े हुए, पहला – जब हम कहते हैं कि प्रकाश किरणों का अपवर्तन होता है तो दरअसल होता क्या है? तथा दूसरा – इससे सात रंग किस तरह तैयार होते हैं।

इनमें से दूसरा सवाल थोड़ा कठिन

है इसलिए इसे फिलहाल छोड़ देते हैं। देकार्त के समय पहले सवाल का जवाब मालूम था। 'विलब्रोड स्नेल' ने प्रकाश किरणों पर कुछ प्रयोग किए थे। स्नेल को मालूम था कि जब प्रकाश किरणें एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाती हैं (उदाहरण के लिए हवा से पानी में) तो उनकी दिशा में बदलाव आता है। यह बदलाव कितना होगा यह माध्यम के गुणों पर निर्भर करता है। मान लीजिए प्रकाश किरणें पानी पर 60 अंश का कोण बनाती हुई टकरा रही हैं तो पानी में घुसने के बाद वे किरणें 40 अंश 5 मिनट का कोण बनाती हुई पानी में सफर करती हैं। लेकिन यदि कोई किरण पानी में 40 अंश 5 मिनट का कोण बनाकर सफर करती हुई पानी मे हवा में आ जाए तो हवा में ये किरण 60 अंश का कोण बनाते हुए चलती है।

## इंद्रधनुष बनाकर देखिए

थियोडोरिक का प्रयोग दोहराकर आप भी इन्द्रधनुष बना सकते हैं। इसके लिए कांच के एक गोलाकार फ्लास्क की ज़रूरत होगी। गोल बोतल या बल्ब से भी काम चल जाएगा।

- सबसे पहले पानी से भरे इस कांच के बर्तन को किसी कमरे में रखते हैं। फिर कमरे की सभी खिड़कियां और दरवाज़ें बंद कर देते हैं। कमरा ऐसा चुनना है जहां किसी खिड़की या दरवाज़े में झिर्री बनाने पर धूप कमरे में आ सके।
- कमरे में किसी एक खिड़की या दरवाज़े में झिर्री बनाकर धूप की एक पतली-सी किरण कमरे में आने देते हैं। अब जहां यह किरण पहुंच रही है उस जगह कांच की गोल फ्लास्क हौले से रख देते हैं।

आप देखेंगे कि सूर्य की किरणें बर्तन में से होकर एक खास दिशा में निकलकर ज़मीन पर पड़ रही हैं। ज़मीन पर जहां ये किरणें टकरा रही हैं वहां एक इन्द्रधनुष बन जाता है।

कोई माध्यम किरणों को कितना अपवर्तित करेगा इससे माध्यम का अपवर्तनांक तय होता है। उदाहरण के लिए पानी का अपवर्तनांक 1.33 है यानी अपवर्तनांक का संबंध प्रकाश किरणों की पहले वाली तथा बाद वाली दिशा के अनुपात से है।

$$\text{अपवर्तनांक} = \frac{\text{Sin i}}{\text{Sin r}}$$

$$\text{अपवर्तनांक} = \frac{\text{Sin (आपतित कोण)}}{\text{Sin (अपवर्तित कोण)}}$$

यदि Sin क्या है यह आपको न मालूम हो तो भी कोई बात नहीं – इसे आप एक किनारे रख दीजिए। लेकिन बस एक बात याद रखिए कि

किसी माध्यम का अपवर्तनांक किरणों की दिशा में हुए बदलाव पर निर्भर करता है। यदि किरणें हवा में से कांच में घुमती हैं तो उनकी दिशा में जितना बदलाव होता है वो पक्के तौर पर हवा से पानी में घुसने वाली किरणों की दिशा में हुए बदलाव से ज़्यादा होगा। यानी कांच का अपवर्तनांक पानी मे ज़्यादा होगा। कांच का अपवर्तनांक लगभग 1.5 होता है इसलिए विविध किस्म के लेंस कांच के ही बनाए जाते हैं – क्योंकि कांच का काम ही है किरणों की दिशा में परिवर्तन करना। अपवर्तनांक का सिद्धांत और उससे जुड़े दो प्रयोग बॉक्स में दिए हैं उन्हें ज़रूर करके देखिए। स्नेल के अनुसार प्रकाश किरणें यदि हवा से हवा में चलती हैं तो किरणों की पहले वाली और बाद वाली दिशा समान ही रहेगी यानी हवा से हवा का अपवर्तनांक 1.0 होगा।

## अलेक्ज़ेंडर बैंड उर्फ काले पट्टे

यहां पर हम 'अलेक्जेंडर बैंड' के बारे में भी चर्चा कर सकते हैं। आप प्राथमिक और द्वितीय इंद्रधनुष वाले चित्र को देखिए। चित्र में दिखाए अनुसार सूर्य की किरणें जब पानी की बूंद पर पड़ती हैं तो वे दो दिशाओं से ही बाहर निकल सकती हैं – ABCDF प्राथमिक किरण तथा ABCDEF द्वितीय किरण। इन दो दिशाओं की किरणों से 42 डिग्री और 51 डिग्री के कोण बनते हैं। पानी के विशिष्ट अपवर्तनांक के कारण 42 डिग्री और 51 डिग्री के बीच की दिशाओं में प्रकाश किरणें अपवर्तित नहीं हो सकतीं। इसीलिए इन दो इंद्रधनुषों के बीच का हिस्सा हमें काला दिखाई देता है। जिसे हम 'अलेक्ज़ेंडर बैंड' के नाम से जानते हैं। स्नेल के नियमों से यह पता चला कि पानी की गोल बूंदों व उनके विशेष अपवर्तनांक की वजह से इस तरह का इंद्रधनुष बनता है।

जब बारिश होती है तब लाखों की संख्या में पानी की बूंदें हवा में तैर रही होती हैं। प्रत्येक बूंद कांच के गोलाकार बर्तन की तरह सूर्य किरणों को अपवर्तित करके आप तक पहुंचाती है। बूंदों के इस सामूहिक योगदान की वजह से ही इंद्रधनुष की प्राथमिक और द्वितीय कमान दिखाई देती है।

## इंद्रधनुष के रंग

अभी तक की गई चर्चा में हमने इंद्रधनुष का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यानी इंद्रधनुष के मोहक रंगों के बारे मे कुछ भी बातचीत नहीं की। यदि इंद्रधनुष के सिर्फ काले या सफेद पट्टे आसमान में बनते तो शायद वे हमें इतना आकर्षित न करते। किस तरह बनते होंगे इंद्रधनुष के रंग?

यहां मुझे एक ब्रिटिश चित्रकार जॉन मिलाइस की याद आती है।

जॉन मिलाइस द्वारा 'अंधी लड़की' शीर्षक से बनाया हुआ चित्र। इसमें प्राथमिक और द्वितीय दोनों इंद्रधनुष दिखाई दे रहे हैं।

मिलाइस एक प्रतिभावान चित्रकार था और अपनी युवावस्था में ही महारानी विक्टोरिया के दरबार में शाही चित्रकार के रूप में नियुक्त किया गया था। सन् 1856 में मिलाइस ने 'एक अंधी लड़की' शीर्षक से चित्र बनाया, जो बाद में काफी मशहूर हुआ। इस चित्र में अंधों की दुनिया और इंद्रधनुष केन्द्रीय विषय थे। इंद्रधनुष ने चित्रकारों को कितना प्रभावित किया यह इसका एक बेहतरीन उदाहरण है।

पीले रंग के सूर्य प्रकाश से इंद्रधनुष के सात रंग किस तरह बनते हैं यह बात 16वीं सदी के वैज्ञानिकों के लिए

एक पहेली बनी हुई थी और इस पहेली को सुलझाने के लिए न्यूटन जैसे व्यक्ति की ज़रूरत थी। वैसे न्यूटन के बारे में आप थोड़ा-बहुत जानते ही होंगे। न्यूटन की लिखी किताब 'प्रिंसिपिया मैथेमेटिका' में उसने गति के नियम, गुरुत्वाकर्षण और वृताकार कक्षाओं से संबंधित नियम पेश किए। लेकिन न्यूटन की ज़बरदस्त कल्पना शक्ति के दर्शन उसकी दूसरी किताब 'ऑप्टिक्स' में होते हैं। न्यूटन को बचपन से ही प्रकाश को लेकर काफी उत्सुकता थी। ऑप्टिक्स में न्यूटन ने प्रकाश संबंधी परिकल्पनाएं, सिद्धांत और प्रयोग सुझाए हैं। जैसे – प्रकाश किरणें प्रकाश कणों से बनी होती हैं तथा एक सीधी रेखा में चलती हैं, सात रंगों को मिलाकर सफेद रंग बनता है, लेंस और आइने का इस्तेमाल करके दूरबीन कैसे बनाई जाती है, सड़क पर बिखरे तेल पर रोशनी पड़ने पर विविध रंग किस तरह दिखाई देते हैं? इसी तरह के कई अवलोकन न्यूटन ने किए और उनके पीछे निहित कारणों की जांच-पड़ताल की। निश्चित ही न्यूटन का ध्यान इंद्रधनुष की ओर गया था। ऑप्टिक्स में न्यूटन ने इंद्रधनुष बनने के कारणों के बारे में लिखा है। 'प्रकाश किरणें अलग-अलग रंगों के कणों से मिलकर बनी हैं' न्यूटन की यह परिकल्पना थोड़ी गलत साबित होने के बावजूद न्यूटन की किताब ऑप्टिक्स आज भी प्रासंगिक है।

न्यूटन ने सन् 1666 में एक प्रिज़्म का इस्तेमाल करके यह साबित किया कि सूरज की रोशनी सात रंगों में विभाजित होती है। उसने यह दिखाने की कोशिश की कि यदि पानी का अपवर्तनांक बैंगनी किरणों के लिए ज़्यादा हो और लाल रंग की किरणों के लिए कम हो तो बैंगनी किरणों के मार्ग में विचलन या बदलाव ज़्यादा होगा, लाल किरणों के विचलन के मुकाबले। अर्थात पानी में घुसने पर अलग-अलग कोण से अपवर्तित होने के कारण विभिन्न किरणें एक-दूसरे से थोड़ी फर्क दिशा में गमन करती हैं।

दो अलग-अलग रंगों की किरणों की दिशा में विचलन कितना होगा यह इन किरणों के लिए माध्यम के अपवर्तनांक पर निर्भर करता है। न्यूटन ने प्रिज़्म से बाहर आ रही किरणों में बैंगनी व लाल किरणों का अपवर्तनांक पता किया। पानी में लाल किरणों के लिए अपवर्तनांक 1.32 था तथा बैंगनी किरणों के लिए 1.336 इस तरह उसने इंद्रधनुष की मोटाई (यानी लाल रंग से बैंगनी रंग तक की मोटाई) दो डिग्री होती है यह पता लगाया। इस गणना के लिए न्यूटन ने सूर्य के आकार पर भी विचार किया था क्योंकि सूर्य किरणें किसी एक बिन्दु से आती प्रतीत नहीं होती, बल्कि आसमान में सूर्य की चकती लगभग आधा डिग्री का

# अपवर्तन

प्रकाश किरणें जब एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाती हैं तो उनकी दिशा में परिवर्तन होता है। इसे प्रकाश का अपवर्तन कहते हैं। आइने में होने वाले परावर्तन से तो हम सभी लोग बखूबी वाकिफ हैं लेकिन अपवर्तन थोड़ी फर्क चीज़ है। अपवर्तन की घटना से संबंधित आसानी से हो सकने वाले दो मज़ेदार प्रयोग यहां दे रहे हैं।

## टूटी हुई पेंसिल

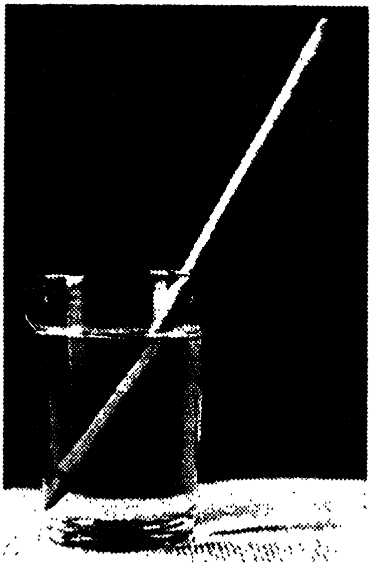

कांच के एक साफ गिलास में पानी भरो और एक पेंसिल लो। इस बात का ध्यान रखना होगा कि पेंसिल गिलास से लंबी हो। अब इस पेंसिल को पानी से भरे गिलास में रखते हैं। गिलास और पेंसिल को एक तरफ से देखिए। यह क्या! पेंसिल टूटी हुई क्यों दिख रही है? घबराइए नहीं पेंसिल सही सलामत है। बस प्रकाश किरणों ने थोड़ा मज़ाक किया है आपके साथ। पेंसिल से टकराकर आने वाली किरणें जब पानी में से बाहर निकलती हैं तो अपवर्तन के कारण उनकी दिशा में परिवर्तन होता है जिसकी वजह से पेंसिल का पानी के भीतर वाला हिस्सा पेंसिल के बाकी हिस्से से हटा हुआ दिखता है।

## छिपा हुआ सिक्का

एक खाली कप या कटोरी लेते हैं। इस बर्तन के बीचों-बीच एक रुपए का सिक्का रखना होगा। उसके बाद इस बर्तन को किसी टेबल या तिपाई पर रखकर आप किसी ऐसी जगह बैठ जाइए जहां से सिक्का न दिखता हो। या फिर ऐसा भी कर सकते हैं कि अगर बर्तन में रखा सिक्का दिख रहा हो तो थोड़ा-थोड़ा पीछे हटते जाइए जब तक कि सिक्का दिखना

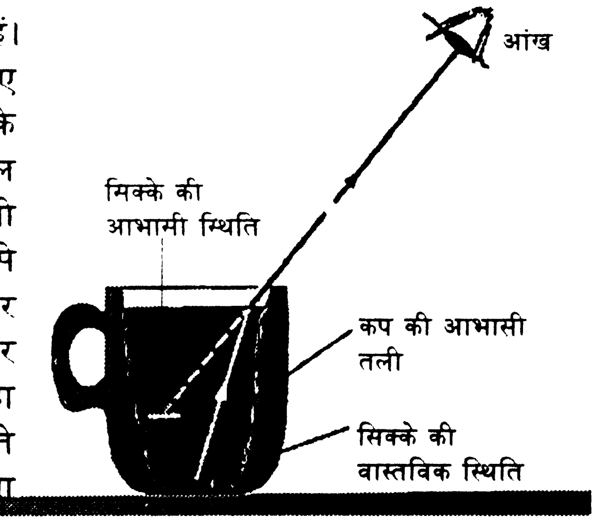

बंद न हो जाए। अब अपने किसी साथी से कहिए कि वह इस बर्तन को धीरे-धीरे पानी से भरना शुरू करे। जैसे-जैसे बर्तन में पानी भरता जाता है सिक्का आपको दिखना शुरू हो जाता है।

अब आप ही सोचिए कि जब खाली बर्तन में आपको सिक्का नहीं दिख रहा था तो पानी भरने के बाद वह कैसे दिखने लगा, जबकि आप भी जानते हैं कि सिक्का पानी में तैर नहीं रहा है।

खाली बर्तन में सिक्के से परावर्तित होने वाली किरणें बर्तन के किनारों से टकराकर वहीं रुक जाती थीं, वे हम तक नहीं पहुंच पा रही थीं। लेकिन पानी भरने के बाद पानी से हवा में जाते वक्त किरणों की दिशा बदल जाती है जिसके फलस्वरूप सिक्का हमें दिखने लगता है। इसी तरह अपवर्तन की वजह से कम गहरे तालाब या स्वीमिंग पुल की तली ऊपर उठी हुई दिखती है।

कोण बनाती है। इन सब तथ्यों का इस्तेमाल भी उसने अपनी गणनाओं के लिए किया।

सफेद प्रकाश सात रंगों में विभाजित होता है। यदि इन्हीं सात रंगों को फिर इकट्ठा किया जाए तो सफेद रंग बनना चाहिए। यह प्रयोग बॉक्स में दिया गया है इसे ज़रूर करके देखिए। इस प्रयोग में जिस सात रंगों वाली चकती का इस्तेमाल किया गया है उसे न्यूटन की रंगीन चकती कहते हैं।

जब अपवर्तन और रंगों का बनना इन दोनों बातों को जोड़कर देखते हैं तो प्राथमिक और द्वितीय इंद्रधनुष के रंगों के बारे में काफी सारी बातें उजागर होती हैं। सूर्य की किरणें जब पानी की बूंदों में से दो बार परावर्तित होती हैं तो लाल और बैंगनी रंग का क्रम भी उल्टा हो जाता है। पानी की बूंद में से अपवर्तन के बाद बाहर निकलने वाली किरणों से बने इंद्रधनुष में बैंगनी रंग बाहर की ओर तथा अंदर की ओर लाल रंग होता है। यानी द्वितीय इंद्रधनुष में रंगों का क्रम प्राथमिक इंद्रधनुष से उल्टा होता है या दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि द्वितीय इंद्रधनुष प्राथमिक इंद्रधनुष का प्रतिबंब होता है। इसी तरह के अनेक प्रयोग न्यूटन ने किए थे। इस सब से न्यूटन की सोच-विचार की क्षमता का आभास मिलता है।

इंद्रधनुष की पहेली 1800 सालों में यहां तक तो सुलझ गई थी लेकिन इस बीच इंद्रधनुष के सूक्ष्मता और बारीकी से किए गए अवलोकनों से और भी कई मज़ेदार तथ्य सामने आ रहे थे; जैसे इंद्रधनुष से सटकर दिखाई देने वाली गुलाबी-हरी पट्टियां जो यदाकदा दिखाई देती हैं। ऐसा लग

रहा था कि मानो प्रकृति के चमत्कार और मानवीय कल्पना शक्ति में एक ज़ोरदार मुकाबला चल रहा हो। इन नए अवलोकनों के पीछे काम कर रहे कारणों की खोज के लिए कल्पना की एक लंबी छलांग लगानी पड़ी। पिछले कुछ दशकों में ही इन सब को लेकर समझ बन सकी है। ये कल्पनाएं समझने में कठिन हैं इसलिए इनके विस्तार में न जाते हुए कुछ मोटी-मोटी बातें ही करेंगे।

## न्यूटन की सात रंगों वाली चकती

सूर्य की किरणों को पानी की बूंद या प्रिज़्म सात रंगों में विभाजित करते हैं यह तो आपको पता ही है। न्यूटन के अनुसार इन्हीं सात रंगों को यदि इकट्ठा किया जाए तो उनसे सफेद रंग तैयार होता है। एक सरल से प्रयोग से इस बात को परखा जा सकता है।

- इसके लिए सबसे पहले हमें सात रंगों की ज़रूरत होगी: लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, गहरा नीला और बैंगनी।
- अब गत्ते की एक गोलाकार चकती पर पेंसिल से सात समान हिस्से बनाइए।
- चकती पर हरेक हिस्से में एक रंग भरिए। इस प्रकार चकती के सातों हिस्सों पर एक-एक रंग आ गया।
- अब चकती के बीचों-बीच कील से एक छेद करके कील फंसा लीजिए। और चकती को ज़ोरों से घुमाइए। चकती पर आपको सात रंग दिखते हैं क्या? ऐसा क्यों हुआ होगा, ज़रा सोचिए।

## प्रकाश: कण है या तरंग

न्यूटन का मानना था कि प्रकाश के सभी गुणधर्म, प्रकाश के अलग-अलग रंगों के कणों से उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिए न्यूटन के अनुसार विविध रंगों के कण अलग-अलग गति से चलते हैं इसलिए उनका अपवर्तन भी अलग-अलग दिशाओं में होता है। लेकिन इस सिद्धांत के आधार पर न्यूटन प्रकाश के सभी गुणों की व्याख्या करने में असमर्थ था; उदाहरण के लिए यदि आप किसी कपड़े में से किसी जलते हुए बिजली के बल्ब को देखते हैं तो बल्ब बहुत सारे कोनों वाले तारे की तरह दिखता है। एक और उदाहरण दिया जा सकता है – धूप में अपने हाथ की दो अंगुलियों को काफी पास-पास लाते हुए – उन्हें बिना सटाए – इन अंगुलियों की छाया को देखिए। छाया में अंगुलियां सटी हुई दिखती हैं। ऐसी अनेक पहेलियों के जवाब न्यूटन के सिद्धांत से नहीं मिलते।

न्यूटन के ही समकालीन एक अन्य

वैज्ञानिक हाइगेन का मत था कि प्रकाश मूल रूप से कणों से नहीं बल्कि तरंगों से बना होता है। प्रकाश के अलग-अलग रंग यानी अलग-अलग तरंग लंबाई की तरंगें। हाइगेन की परिकल्पना न्यूटन की परिकल्पना से काफी फर्क थी लेकिन प्रकाश का स्वरूप क्या है यह विवाद कैसे खत्म हो?

कई सालों तक की गई कोशिशों में मैक्सवेल, मैक्सप्लांक, आइंस्टीन जैसे कई वैज्ञानिकों के नाम शुमार हुए। तब कहीं जाकर सन् 1900 में यह बताया जा सका कि प्रकाश कण और तरंग दोनों रूपों में मौजूद होता है; यानी प्रकाश में कण और तरंग दोनों ही गुण हैं।

बीसवीं सदी की शुरुआत में यह परिकल्पना थोड़ी अटपटी लग रही थी लेकिन आज यह सर्वमान्य है। इंद्रधनुष के कई सूक्ष्म तथ्यों का अध्ययन तथा व्याख्या ऊपर बताई परिकल्पना के आधार पर की जा सकती है। लेकिन फिर भी यह एक शोध का विषय है इसलिए इसे फिलहाल यहीं रोकते हैं।

❊ ❊ ❊

इन दो हज़ार सालों में विज्ञान ने, चित्रकारों ने, कवियों ने कहां-कहां तक कल्पना की उड़ान भरी है उसे देखिए। इन दो हज़ार सालों में इंसानी सोच और इस्तेमाल की जाने वाली टेक्नॉलॉजी में ज़बरदस्त बदलाव आया है लेकिन इन सबके बावजूद इन्द्रधनुष को लेकर लोगों में जो आकर्षण या कौतुहल था वह आज भी बरकरार है।

इन्द्रधनुष बारिश के दिनों में भी कब दिखाई देगा यह बता पाना संभव नहीं है इसलिए यदि कभी आपको इन्द्रधनुष दिखाई दे तो अपने कामों को थोड़ी देर के लिए दर किनार करके गौर से इन्द्रधनुष को देखिए क्योंकि हो सकता है आपको द्वितीय इन्द्रधनुष भी दिखाई दे जाए। और किस्मत आप पर मेहरबान हो तो 'अलेक्ज़ेंडर बैंड' दिख सकते हैं! यह प्रकृति को समझने का एक शानदार मौका है इसलिए ऐसा कोई भी मौका मत गंवाइए।

**प्रदीप गोठोस्कर:** नेशनल सेंटर फॉर रेडियो एस्ट्रोनॉमी (एन. सी. आर. ए.) में कार्यरत हैं। मराठी संदर्भ के संपादन समूह के सदस्य हैं और विज्ञान लेखन में रुचि रखते हैं।

**अनुवाद: माधव केलकर**। संदर्भ में कार्यरत।

*यह लेख मराठी शैक्षणिक संदर्भ के अंक 2, अक्टूबर-नवंबर 1999 से लिया गया है।*

*इंद्रधनुष के संबंध में एक और लेख शैक्षिक संदर्भ के अंक 16 मार्च-अप्रैल 1997 में प्रकाशित हुआ है।*

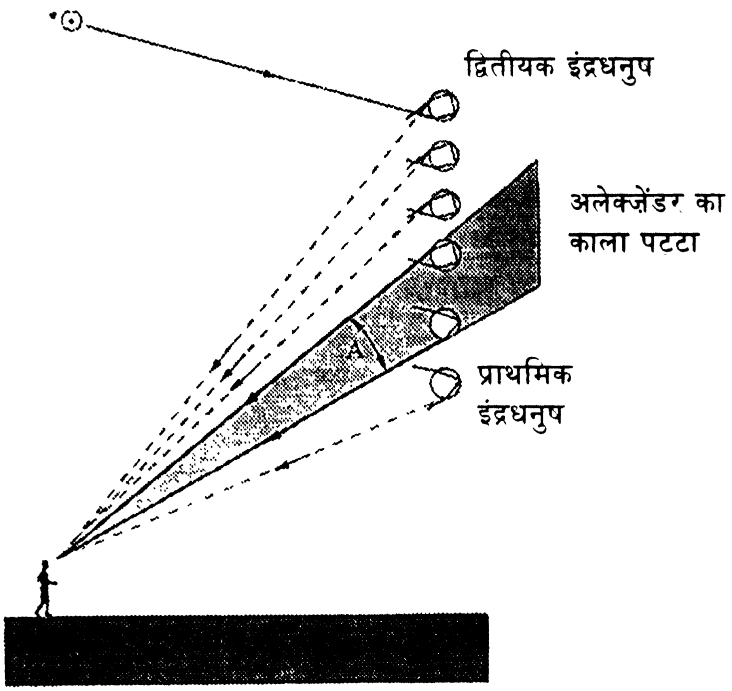


**इंद्रधनुष का विहंगम दृश्य:** प्राथमिक व द्वितीय इंद्रधनुष किसी को कब और कहां दिखेंगे? चित्र में खड़े व्यक्ति के पास वायुमंडल में बिखरी पानी की गोल बूंदों से अपवर्तित होकर केवल वही किरणें पहुंचेंगी जो 42 अंश का कोण बना रही हैं। इसीलिए उसे आकाश में इंद्रधनुष दिखता है, जिसे हम प्राथमिक इंद्रधनुष कहते हैं। ऊपर वाली बूंदों से प्रकाश की किरणें अपवर्तित होकर इस व्यक्ति की दिशा में आती ही नहीं हैं इसलिए वहां पर रंग नहीं दिखते। ये हिस्सा अलेक्ज़ेंडर बैंड कहलाता है, और कई बार थोड़ी सी कालिमा लिए होता है। कभी-कभी इस हिस्से के ऊपर की तरफ प्राथमिक इंद्रधनुष से काफी हलका द्वितीय इंद्रधनुष दिखता है जो उन किरणों से बनता है जो और ऊपर की बूंदों के अंदर दो बार टकराकर, फिर अपवर्तित होकर 51 अंश का कोण बनाती हुई दर्शक तक पहुंचती हैं।

एक और बात गौर करने लायक है कि हर दर्शक को जो इंद्रधनुष दिखता है वह उसका एकदम अपना इंद्रधनुष होता है क्योंकि 'वही' इंद्रधनुष और किसी को नहीं दिख सकता! वैसे तो यह बात देखने की हर क्रिया के लिए सही है; एक ही वस्तु को देखते हुए भी उस वस्तु से आप तक पहुंचने वाली और आपके दोस्त तक पहुंच रही किरणें तो अलग ही होती हैं। फिर भी जब इंद्रधनुष के संबंध में यह बात कहते हैं तो कुछ अलग ही रोमांच महसूस होता है!

# लोग
# और उनके सोचने-समझने के तरीके

उमा अय्यर

लोग कैसे सोचते-समझते हैं और उनकी सोच-समझ पर किन बातों का असर पड़ता है – इस मुद्दे पर काफी खोजबीन और अध्ययन किया जा रहा है। ऐसा समझा जा रहा है कि लोगों के सोचने-समझने के तरीके उनके दैनिक जीवन के संदर्भ में विकसित होते हैं।

यह संदर्भ क्या होता है, इसके बारे में ज़रूर विभिन्न मत मिलते हैं। शायद कुछ उदाहरणों पर गौर करने से बात साफ हो।

## तरीका अपना-अपना

मध्य प्रदेश में तेंदु पत्ते इकट्ठे करने वाले आदिवासियों में गिनने का अपना ही एक तरीका है। वे पांच तेंदु पत्तों का एक 'पचोर' मानते हैं और पत्तियों को एक, दो, तीन से आठ, नौ, दस तक गिनने की बजाए पचोर के हिसाब से यानी पांच-पांच के समूह में ही गिनती करते हैं।

दूसरा उदाहरण लेते हैं। लाइबीरिया की एक जनजाति है जिसका नाम 'क्पेल' है। एक शोधकर्ता ने क्पेल लोगों को तरह-तरह की चीज़ों का ढेर दिया और कहा कि इनमें किन-किन चीज़ों को एक साथ रखा जाना चाहिए, बताओ। इनमें कुछ खाने का सामान, कुछ कपड़े, कुछ औज़ार और कुछ बर्तन जैसी चीज़ें थीं। हर तरह की लगभग पांच वस्तुएं थीं। जब लोगों से कहा गया कि जो चीज़ें एक साथ रहनी चाहिए उन्हें साथ रख दें; तो उन्होंने पश्चिमी शिक्षा में पढ़े लोगों की तरह खाद्य सामग्री, औज़ार जैसी श्रेणियां न बनाकर अलग ही ढंग से सोचा। उदाहरण के लिए उन्होंने चाकू और मौसंबी को एक साथ रखा क्योंकि चाकू का उपयोग मौसंबी काटने के लिए होता है।

इस तरह के उत्तर सुनकर शोधकर्ता

यह सोचने लगे कि क्पेल लोगों की सोचने-समझने की क्षमता काफी कमज़ोर है। जब क्पेल लोगों से पूछा गया कि उन्होंने इस तरह का वर्गीकरण क्यों किया तो उनका जवाब चौंकाने वाला था। वे बोले, "पढ़ने वाले लोग खाने की सब चीज़ों को साथ रखेंगे, सब औज़ारों को साथ रखेंगे। पर हमने सोचा कि जो चीज़ें एक-दूसरे के साथ काम आती हैं उन्हें साथ रखना चाहिए।"

यह साफ था कि क्पेल लोग पश्चिमी बुद्धिमत्ता के हिसाब से भी चीज़ों का वर्गीकरण कर सकते थे। पर उन्हें चीज़ों को उपयोग के अनुसार वर्गीकृत करने में ज़्यादा सार्थकता नज़र आ रही थी।

यह एक उदाहरण था कि कैसे एक संस्कृति दूसरी संस्कृति को अपने से कम आंक लेती है जबकि हर संस्कृति अपने संदर्भ के अनुसार सोचने समझने के अपने-अपने तरीके ईज़ाद करती है; और इनका सीधे तौर पर तुलनात्मक मूल्यांकन नहीं किया जाना चाहिए। आज जब यह समझ में आने लगा है कि बच्चे दुनिया में अपने रोज़ाना के अनुभवों से विज्ञान की एक अच्छी-खासी समृद्ध समझ बना लेते हैं, तब मनोवैज्ञानिक भी रोज़ाना के संदर्भों में काम में लाई जाने वाली सोच-समझ का गहराई से अध्ययन करने लगे हैं।

माना गया है कि बच्चे ऐसे ही संदर्भों से विज्ञान के भी कई विषयों के बारे में सीख लेते हैं।

## कुछ सर्वेक्षण: कुछ अध्ययन

बृल (1986) और रू (1993) द्वारा किए गए एक ऐसे ही अध्ययन में बृल ने 'माली' देश के एक गांव की लड़कियों के बारे में बताया कि वहां तीन वर्ष की उम्र से ही माताएं अपनी बेटियों से अनाज साफ कराना, कूटना-पीसना, जैसे काम कराती हैं। हालांकि इन कामों के लिए किसी प्रकार का कोई प्रशिक्षण आदि नहीं दिया जाता, फिर भी पांच साल की उम्र तक ये लड़कियां इन कामों में उतनी ही निपुण हो जाती हैं, जितना कोई वयस्क।

लाइबीरिया के दर्ज़ियों पर लेन (1977) द्वारा किए गए एक अध्ययन में गणित के कुछ और उदाहरण मिलते हैं। यह अध्ययन दिखाता है कि दुकान पर दर्ज़ियों को सैंकड़ों बार अलग-अलग तरह से नाप का इस्तेमाल करना होता है। इस हिसाब-किताब के लिए दर्ज़ी जो गिने-चुने तरीके अपनाते हैं वे सीमित लग सकते हैं; पर उनके चलते यह कभी नहीं होता कि कोई काम कभी एकदम बेसिर-पैर का हो कर रह जाए।

इसकी तुलना में स्कूली गणित-शिक्षा छात्रों को अनेकानेक नियमों,

फॉर्मूलों और संकेतों के इस्तेमाल का अवसर देती है, जिनसे वास्तव में अत्यन्त विषम समस्याओं का हल किया जा सकता है, पर इस शिक्षा को पाने वाले छात्र अक्सर बेसिर-पैर की गलतियां करते पाए जाते हैं।

शालाओं के माहौल में अक्सर ऐसे सवालों को बहुत अलग तरीके से समझा जाता है। उदाहरण के लिए, एक प्रयोग में 3/4 कप पनीर का दो तिहाई (2/3) हिस्सा लेने को कहा गया, तो एक दर्ज़ी ने पूरे पनीर को एक गोले में फैलाकर उसके चार भाग कर दिए। फिर उसमें से एक हिस्सा निकाल दिया। अब बचे तीन हिस्सों में से दो ले लिए। इसी सवाल को स्कूल में बिल्कुल अलग ढंग से पेश किया जाता है – "3/4 का 2/3 क्या होता है?" गणित के हिसाब से देखा जाए तो दोनों सवाल वही हैं।

इसी तरह समस्याओं का हल ढूंढने की क्षमता पर एक अध्ययन किया गया। इसमें भारत में तीन तरह के बच्चों के बीच तुलना की गई – एक तरफ वे बच्चे जो दुकानदारी करते हैं पर स्कूल नहीं जाते, ऐसे बच्चे जो दूकान संभालते हैं और स्कूल भी जाते हैं, और तीसरा समूह उन बच्चों का था जो स्कूल जाते हैं पर दुकान पर कोई मदद नहीं करते।

उनसे गणना के व इबारती सवाल पूछे गए। दोनों ही तरह के सवालों में उन स्कूली बच्चों ने जो दुकानदार नहीं हैं, मौखिक गणना या मनगणित का प्रयोग बहुत कम किया, बनिस्बत उनके जो दुकानदार थे। स्कूली बच्चों ने ऐसी गलतियां भी की, जिनका कारण नहीं समझा जा सका। इससे यह साबित होता है कि दुकानदारी से जुड़े हुए बच्चे हिसाब लगाने में गलती नहीं कर सकते क्योंकि इसका सीधा असर उनके काम पर पड़ता है, जबकि स्कूलों के बच्चे वही हिसाब लगाने में अक्सर भयंकर गलतियां कर देते हैं।

इससे यह स्पष्ट होता है कि जिन बच्चों को रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में इस तरह के सवालों से जूझना पड़ता है, वे अपने लिए ज़रूरी गणितीय क्षमता हासिल कर लेते हैं।

## रोज़मर्रा की दक्षताएं

लेकिन साथ ही इस बात पर भी गौर करना महत्वपूर्ण है कि इस तरह की दक्षताएं एक स्तर तक और एक कार्य क्षेत्र तक सीमित होकर रह जाती हैं। इसलिए वे सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश जो कि ज्ञान को बनाने व बढ़ाने में मदद करते हैं, वही उस ज्ञान को संकुचित और सीमित भी कर सकते हैं। यूं तो ज्ञान जिस भी स्थिति या अनुभव से मिला हो, वह अन्य स्थितियों में भी काम आता है,

लेकिन शायद यह उनके लिए ज़्यादा संभव हो, जिन्हें स्कूली शिक्षा भी प्राप्त हुई है।

ये सोचने वाली बात है कि रोज़मर्रा की दक्षताओं को जानने की क्या ज़रूरत है, और इनका स्कूल में सिखाई दक्षताओं से क्या संबंध है? क्या इनका बुद्धिमता या सीखने की क्षमता के साथ कोई संबंध है या नहीं?

इसका उत्तर सकारात्मक है। समझना व तर्क करना व्यक्ति के सामाजिक संदर्भ का हिस्सा है, क्योंकि किसी सामाजिक संदर्भ में ही जानने समझने की क्रिया होती है। इन क्षमताओं को समाज से अलग नहीं देखा जा सकता। स्कूल भी समाज का हिस्सा है। इसलिए हम यह नहीं कह सकते कि यहां ऐसी दक्षताएं सीखी - सिखाई जा सकती हैं जिनका संदर्भ छात्रों के जीवन में नहीं बना है। दुख की बात ये है कि स्कूली शिक्षा रोज़मर्रा की 'शिक्षा' से संबंध नहीं बना पाती। इसी कारण बच्चों को स्कूल में सीखी चीज़ों को अपनी ज़िन्दगी के संदर्भ में समझने में दिक्कत होती है। लेकिन दूसरी तरफ स्कूल जाने से ही हम बहुत-सी सांकेतिक विधियां सीखते हैं, अमूर्तीकरण और सामान्यीकरण करने की प्रक्रिया सीखते हैं जिससे अनेकानेक स्थितियों के बीच संबंध समझे जा सकते हैं।

स्कूल कुछ ऐसी दक्षताओं को उभारने में मदद करते हैं जो कि नई परिस्थितियों में हमारे काम आएं।

अध्यापकों को इस मुद्दे पर गंभीरता से सोचना होगा कि बच्चों में जो भरपूर दक्षताएं व सोच-समझ पहले से हैं, उनका प्रयोग पाठ्यक्रम के लिए किस तरह करें। अब सवाल यह है कि दोनों का सही संतुलन या सामंजस्य कैसे बनाया जाए।

शहर के स्कूलों में जो निम्न आर्थिक वर्ग के बच्चे आते हैं वे मज़दूरी भी करते हैं। उसी तरह गांव में बच्चे बड़ों के साथ-साथ रहकर घर के काम करना और खेत पर काम करना सीख जाते हैं।

यदि अध्यापक इन दक्षताओं को पहचान ले, तो उन्हें आधार मानकर और जटिल दक्षताओं को विकसित करने के तरीके बना सकते हैं।

**उमा अय्यर:** बड़ोदा स्थित एम. एस. यूनिवर्सिटी से पढ़ाई की है।
अनुवाद: **शिवानी बजाज:** एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में कार्यरत।

# हृदय एक पंप है

## विलियम हार्वे की भूमिका

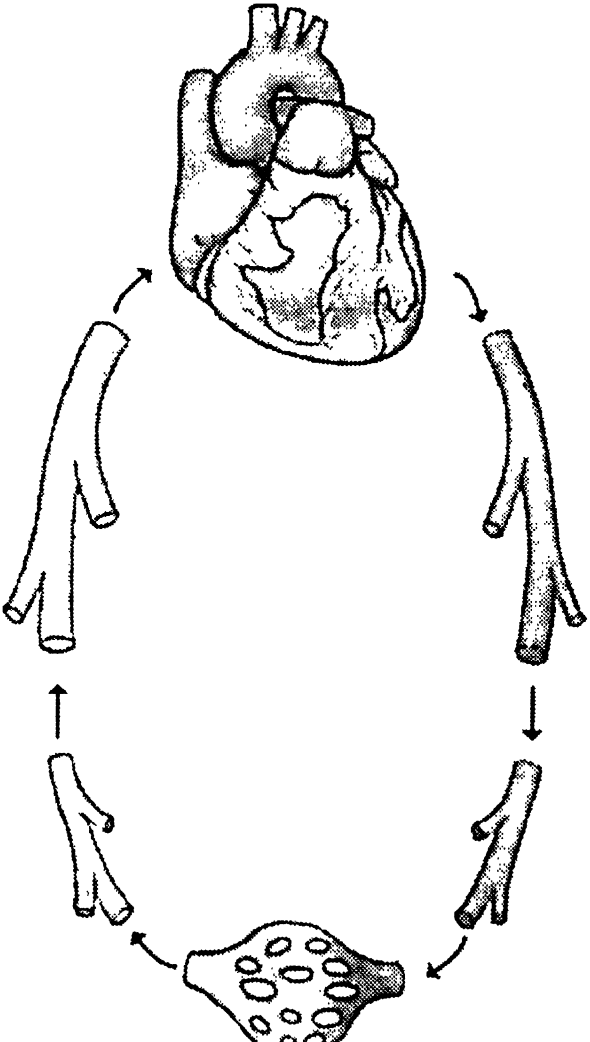

विलियम हार्वे का जन्म इंग्लैंड के कैंट शहर में 1 अप्रैल, 1578 को हुआ था। स्कूली व चिकित्सा शिक्षा पाने के पश्चात् वह सहायक चिकित्सक के पद पर सेंट बारथॉलोम्यू अस्पताल में नियुक्त हुआ। हार्वे ने यहां 34 वर्ष तक कार्य किया और इस बीच इंग्लैंड के राजा, जॉर्ज प्रथम, का विशिष्ट फिज़िशियन नियुक्त हुआ। इसी दौरान उसने अपना महत्वपूर्ण शोधकार्य भी किया।

सबसे पहले हार्वे ने गेलन व यूनानी दर्शनशास्त्रियों के चार मूल तत्व वाली परिकल्पना का खंडन किया। उसके अनुसार शरीर का मूल तत्व खून था।

प्राचीन काल से ही लोगों ने प्रकृति के अलग-अलग चक्रों को देखा था— दिन और रात, मौसम का चक्र, हवा और बारिश का चक्र इत्यादि। चक्र या वृत्त का महत्व न केवल प्रकृति में बल्कि धार्मिक विचारों में भी उभरता है। हार्वे इन विचारों से ज़रूर प्रभावित हुआ होगा। उसकी परिकल्पना थी कि खून भी एक चक्र में बहता है तथा खून एक बंद परिपथ में परिसंचारित होता है। शायद इसीलिए उसने शिराओं के वाल्व को गेलन की तरह नहीं नकारा, बल्कि उन एकतरफा वाल्व को खून के एक दिशा में बहने का प्रमाण माना।

इस बात को सिद्ध करने के लिए उसने एक बहुत ही सरल प्रयोग किया। उसने अपनी ही बांह पर, कंधे के पास, एक रस्सी कसकर ऐसे बांधी कि बांह की सतही शिरा बंद हो परंतु नीचे की धमनी खुली रही। उसने देखा कि रस्सी और उंगलियों के बीच शिरा फूलने लगी और रस्सी की दूसरी तरफ वह खाली हो गई। उसने फिर रस्सी के पास फूली शिरा को दबाया और उंगली सरकाकर शिरा को खाली कर दिया। उंगली उठाने पर खाली शिरा में खून उस बिंदु से भरने लगा जो हृदय से सबसे दूर था।

उसने यह प्रयोग जानवरों पर भी दोहराया। न केवल शिराओं के साथ, परंतु धमनियों पर भी। धमनी में विपरीत स्थिति पाई गई। मतलब, बंधी धमनी में खून, रुकावट के ऊपर, हृदय की तरफ भरने लगा और धमनी फूलने लगी। रुकावट के दूसरी तरफ धमनी खाली हो गई।

इन प्रयोगों के आधार पर हार्वे ने निष्कर्ष निकाला कि खून हृदय से धमनियों में बहकर शिराओं द्वारा वापस हृदय में लौटता है। खून एक बंद परिपथ, एक वृत्त, में बहता है।

## पुरानी धारणाएं

प्राचीन काल में लोगों ने हृदय की धड़कनों को भी महसूस किया था परंतु उनकी मान्यता थी कि हृदय सीरिंज

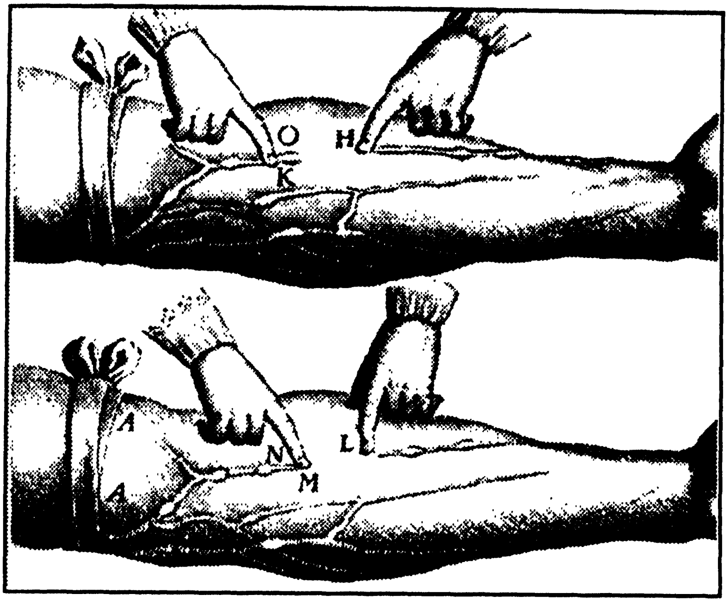


**हार्वे का एक प्रयोग:** हार्वे ने खुद के शरीर पर प्रयोग करके यह समझाने की कोशिश की कि शरीर में खून एक बंद चक्र में बहता है। शिराओं में खून अंगों से हृदय की तरफ और धमनियों में इससे विपरीत दिशा में बहता है। इस चित्र में दिखाए प्रयोग द्वारा हार्वे ने शिराओं में खून के बहाव की दिशा के बारे में पता लगाया।

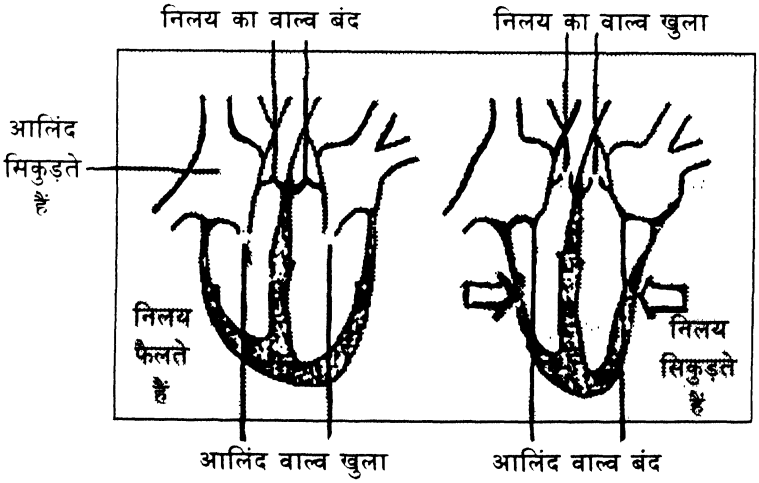


**हृदय में खून का बहाव:** हृदय में खून के बहाव के संबंध में हार्वे का मत था कि फैलाव की स्थिति में खून आलिंदों में भर जाता है। उसके बाद संकुचन आलिंदों से शुरू होकर निलय की तरफ बढ़ता है। आलिंदों में संकुचन की स्थिति में वाल्व खुल जाते हैं और आलिंदों से खून निलय में आ जाता है। तत्पश्चात निलय के संकुचन के समय आलिंद और निलय के बीच के वाल्व बंद हो जाते हैं और खून धमनियों के ज़रिए शरीर में बह जाता है।

## हृदय एक भट्टी है: गेलन के विचार

प्राचीन यूनानवासी मनुष्य को प्रकृति का प्रतिबिंब मानते थे। उनके अनुसार मनुष्य हवा, पानी, मिट्टी और आग से मिलकर बना था। हिपोक्रेटस जिन्हें आधुनिक चिकित्सा शास्त्र का संस्थापक माना जाता है, ने बताया कि शरीर के चार मूल तत्व हैं – खून, श्लेषमा, काला पित्त और पीला पित्त। इन चार तत्वों के अनुपात में आए बदलाव के कारण व्यक्ति के स्वभाव में फर्क होता है। लेकिन यूनानियों ने सबसे ज़्यादा महत्व दिया खून को क्योंकि यूनानी मान्यता थी – ज़्यादा खून यानी ज़्यादा जोशीला और ज़्यादा खुशनुमा स्वभाव।

इस खून के बारे में यूनानी शल्य चिकित्सक गेलन ने सबसे अहम काम किया। गेलन मानता था कि हमारी आंतें खाद्य पदार्थों का रस सोखकर उसे जिगर तक पहुंचाती हैं। जिगर इस रस को खून में बदलता है और उसमें प्राकृतिक आत्मा मिलाता है। जिगर से यह खून शिराओं के ज़रिए शरीर के बाकी भूखे ऊतकों (Tissue) तक पहुंचता है। ऊतक प्राकृतिक आत्मा को सोख लेते हैं जिससे खून कमज़ोर पड़ जाता है। अब खून फिर शिराओं के रास्ते जिगर तक आता है और फिर से प्राकृतिक आत्मा को प्राप्त करता है।

इस परिकल्पना में यह साफ नहीं था कि खून ऊतकों तक पहुंच कर उनमें गर्मी, जोश आदि कैसे उभारता है? आखिर दिमाग को अपना काम करने के लिए अतिरिक्त ऊर्जा की ज़रूरत पड़ती होगी और खून में ज़रूर कोई न कोई आवेश होता होगा। गेलन का मानना था कि यह आवेश हवा से मिलता है। हृदय ही खून और हवा का संयोग करता है। जब जिगर खून से लबालब हो जाता है तो थोड़ा खून हृदय में पहुंचता है। हृदय के एक वाल्व में फेफड़ों की हवा आती है और दूसरे वाल्व में जिगर से खून। इन दोनों वाल्व के

गेलन की परिकल्पना

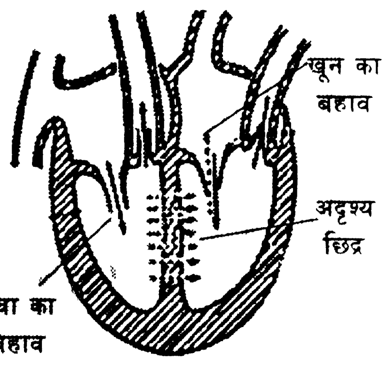


गेलन यह मानता था कि हृदय में एक ओर खून और दूसरी ओर हवा होती है। खून में हवा मिलने के लिए निलय के बीच की दीवार में अदृश्य छिद्र होते हैं।

बीच महीन छेदों वाली एक दीवार है। इन महीन छेदों से खून तो दूसरी ओर नहीं जा पाता लेकिन उस तरफ की हवा ज़रूर आ जाती है। हवा और खून के इस संयोग से एक जैविक लौ उत्पन्न होती है जो खून को गरमाती है। यही लौ शरीर की उष्णता का स्रोत है।

गेलन आगे बताता है कि इस तरह हृदय एक भट्टी की तरह काम करता है। जैविक लौ की वजह से बनने वाला धुंआ फेफड़ों से होता हुआ निकल जाता है। ठंड के दिनों में हम इस धुंए को नाक से निकलते हुए भी देख सकते हैं।

गेलन के विचारों को चर्च ने भी मान्यता दे रखी थी इसलिए गेलन की परिकल्पना को आगामी 1500 साल तक किसी चुनौती का सामना नहीं करना पड़ा। कभी किसी ने गेलन की मान्यताओं से अलग मत व्यक्त करने की कोशिश की तो चर्च के विरोध का सामना करना पड़ता था। जैसे सन् 1543 में वसेलियस ने बताया कि मनुष्य की जांघों की हड्डी मुड़ी नहीं होती, (जबकि गेलन ने जांघों की हड्डी को मुड़ा हुआ बताया था) तो वसेलियस के विचारों का घोर विरोध किया गया। गेलनवादियों ने यहां तक कहा कि गेलन के समय मनुष्य की जांघ की हड्डी मुड़ी होती थी; अब इतना समय बीतने के बाद मानव शरीर में परिवर्तन हो गए हैं। फलस्वरूप वसेलियस को अपने लेखों में संशोधन कर गेलन के पूर्वाग्रहों को भी स्थान देना पड़ा। लेकिन इस समय तक अन्य चिकित्सकों को भी गेलन की परिकल्पना में त्रुटियां नज़र आने लगी थीं। ऐसे चिकित्सकों में एक नाम था विलियम हार्वे का, जिसने गेलनवादियों को कड़ी शिकस्त दी।

जैसे काम करता है, वह फैलकर जिगर से खून खींचता है। जब वह लबालब भर जाता है तब खून उमड़कर शिराओं में चला जाता है। खून निकलने पर हृदय सिकुड़ता है; यह चक्र चलता रहता है।

इस परिकल्पना में हृदय की मांसपेशियों का कोई स्थान नहीं है। लोग मांसपेशियों तथा उनके काम के बारे में कुछ नहीं जानते थे। इसलिए वे समझते थे कि हृदय फैलाव की अवस्था में क्रियाशील होता है।

## हार्वे के अवलोकन

जब हार्वे ने पहली बार जानवर के हृदय का अवलोकन किया तो वह हृदय की दो अवस्थाओं में भेद नहीं कर पाया क्योंकि हृदय तेज़ी से धड़क रहा था। उसने फिर मरते जानवरों का हृदय देखा तब वह आसानी से

## खून और हवा का संबंध

रिचर्ड लोवर एक अंग्रेज़ डॉक्टर था जिसने अपने प्रयोगों द्वारा रक्त परिसंचारण में श्वसन की महत्वपूर्ण भूमिका को स्थापित किया। लोवर ने एक कुत्ते की छाती को चीरकर उस वाहिका को काटा जिसमें फेफड़ों का खून निकलता है। साधारणत: छाती खोलने पर श्वसन अपने आप बंद हो जाता है इसलिए लोवर ने कृत्रिम श्वसन की व्यवस्था की। जब तक कृत्रिम श्वसन जारी रहा तब तक फेफड़ों से निकलने वाला खून लाल था। जैसे ही कृत्रिम श्वसन बंद हुआ तो खून का रंग बैंगनी हो गया।

अपनी शंकाएं दूर करने के लिए लोवर ने एक अन्य प्रयोग किया। उसने गिलास में थोड़ा खून डाला। खून जम गया परंतु सतह का खून लाल रंग का था जबकि तली का खून बैंगनी था। उसने जमे खून को पलट दिया। लाल खून अब नीचे था और बैंगनी खून ऊपर, हवा के संपर्क में था। खून का रंग बदलने लगा। सतह का बैंगनी खून लाल हो गया और तली के पास का लाल खून बैंगनी।

लोवर का निष्कर्ष यह था कि खून और हवा के बीच रासायनिक क्रिया होती है। यह क्रिया ज़िंदा रहने के लिए ज़रूरी है। परंतु उसको यह मालूम नहीं था कि हवा में वह कौन-सा तत्व है जो जीवन के लिए ज़रूरी है। समस्या यह थी कि उस समय हवा को एकल तत्व माना जाता था। लोवर कल्पना ही नहीं कर पाया कि हवा का अंश मात्र, उसका एक घटक, ज़िंदगी के लिए ज़रूरी है। यह समझ जॉन मेयो के प्रयोग से विकसित हुई।

उसकी गतियों की जांच कर पाया क्योंकि मरते हुए जानवर का हृदय धीमी गति से चलता है।

अपने अवलोकनों के आधार पर हार्वे ने यह निष्कर्ष निकाला कि हृदय तभी क्रियाशील होता है जब वह संकुचित या सिकुड़ा हुआ हो, न कि जब वह शिथिल या फैला हुआ हो। दिल की धड़कन छाती में तब महसूस होती है जब हृदय संकुचित होता है। इस बात की पुष्टि के लिए उसने हृदय की धमनी को काटकर खून का बहाव देखा। जब हृदय की दीवारें मोटी होकर संकुचित हुई तब खून झटके से निकला। जब हृदय शिथिल स्थिति में था तो उसमें शिराओं का खून भरने लगा।

हार्वे ने यह भी अवलोकन किया कि कलाई में स्थित धमनी की नब्ज़ हृदय के संकुचन से मेल खाती है।

हार्वे ने देखा कि संकुचन पूरे हृदय में एक साथ नहीं होता है; बल्कि ऊपरी भाग से शुरू होकर निचले भाग तक बढ़ता है। वह हृदय की आंतरिक संरचना से परिचित था। उसको मालूम था कि हृदय के दो भाग दो कोष्ठों में बंटे होते हैं और इन कोष्ठों के बीच एकतरफा वाल्व मौजूद होता है। उसका कहना था कि संकुचन दोनों भागों के ऊपरी कोष्ठों – आलिंद या ऑरिकल – में एक साथ होता है जिससे उनमें भरा खून एकतरफा वाल्व द्वारा निचले कोष्ठों निलय या वेंट्रिकल में जाता है। फिर दोनों निलय एक साथ संकुचित होते हैं जिससे खून धमनियों में धकेला जाता है।

प्रयोग करने के बाद हार्वे का यह विश्वास बढ़ा कि हृदय एक पंप है जो खून को धड़कनों से धकेलता है। हरेक धड़कन के दौरान हृदय संकुचित होकर फैलता है। उसके लिए हृदय की यह धड़कन उसकी बंद परिपथ परिकल्पना का एक और प्रमाण था। उसने एक संकुचन में निकले खून के आयतन का अनुमान भी लगाया; और हिसाब लगाया कि इस गति से 20 मिनिट में शरीर का सारा खून हृदय से निकल जाएगा। क्या, कोशिकाएं इतना खून इतनी अल्प अवधि में सोख पाएंगी? नया खून कहां से आता है? उसका निष्कर्ष था कि वही खून बार-बार हृदय में लौटता है और शरीर में एक चक्र में बहता रहता है।

## समर्थन जुटाना

लेकिन हार्वे को यह अच्छी तरह मालूम था कि लीक से हट कर कोई भी नया विचार लोगों के बीच रखने का अर्थ होगा विरोध, क्योंकि वह गियोर्दानो ब्रूनो और गैलीलियो गेलिली का हश्र देख चुका था। इसलिए जैसे ही उसने रक्त परिसंचारण संबंधी अपने विचारों की पुष्टि की, तुरंत सार्वजनिक और व्यक्तिगत बातचीत में इसे अपने मित्रों, सहयोगियों व डॉक्टरों के साथ चर्चा का विषय बनाया; ताकि जब वह अपने विचारों को लिखित रूप में प्रकट करे तो उसके समर्थन में ज़्यादा लोग जुट सकें। हार्वे ने अपनी पुस्तक के बारे में लिखा, "यह एकमात्र पुस्तक है जो परंपरा का विरोध करती है और इस बात पर ज़ोर देती है कि रक्त शरीर में एक प्रणाली के द्वारा बहता है जिसे इसके पहले पहचाना नहीं गया था।" उसने यह भी साफ-साफ लिखा कि उसके विचार इतने विशिष्ट और अब तक अमान्य हैं, कि उसे केवल कुछ विशेष लोगों के द्वेष का शिकार ही नहीं होना पड़ेगा बल्कि प्रत्येक मनुष्य उसके विरुद्ध हो जाएगा।

प्रारंभिक विरोध के बावजूद हार्वे की परिकल्पना के प्रमाण जीव विच्छेदन, अवलोकन व प्रयोगों द्वारा काफी बड़े पैमाने पर मिले और बड़ी संख्या में डॉक्टरों व वैज्ञानिकों ने इसकी पुष्टि की। हार्वे ने खुद गर्व से कहा कि 'उसने दो हज़ार साल से चली आ रही गलती को सुधारा है।' उसकी खोज 80 से भी अधिक प्रजातियों के अध्ययन पर आधारित थी, जिनमें स्तनपायी, सांप, मछली, मेंढक, केंकड़े, छिपकली, कीड़े आदि शामिल थे।

ऐसा नहीं है कि अवलोकनों व परीक्षणों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की शुरुआत जीव विज्ञान व चिकित्सा के क्षेत्र में हार्वे ने ही की। हार्वे का ही समकालीन फॉन हेल्मॉट्ज़ भी जीव विज्ञान में प्रयोग कर रहा था। 'सेंटोरियस' ने द्रव व ठोस भोजन और मल-मूत्र के अंतर के अनेक प्रयोगों द्वारा पसीने की मात्रा ज्ञात की। लेकिन हार्वे ने अपने अवलोकन, परीक्षण और गणनाओं के आधार पर व्यापक निष्कर्ष निकाले जिनका दूरगामी प्रभाव पड़ा। उदाहरण के लिए हार्वे ने वास्तविक मापन द्वारा मनुष्यों, कुत्तों और भेड़ों के हृदय की क्षमता का पता लगाया। इसके बाद उसने इस संख्या को नाड़ी गति से गुणा किया ताकि हृदय से धमनियों को जाने वाले रक्त की मात्रा का अनुमान लगाया जा सके – एक सामान्य आदमी लगभग 85 पौंड (यानी लगभग 38 किलोग्राम) रक्त अपने हृदय से धमनियों में आधे घंटे में भेजता है। संक्षेप में हार्वे ने यह पाया कि वह शरीर में रक्त परिसंचारण को सिद्ध कर सकता है और रक्त की मात्रा भी ज्ञात कर सकता है। इस प्रकार उसने चिकित्सा व जीव विज्ञान में परीक्षणों की महत्ता पर ज़ोर दिया और तब से यही प्रथा बनी हुई है।

## विचारों का प्रभाव

हार्वे ने अपनी पुस्तक में गेलन की महानता को पूरा आदर देते हुए उल्लेख किया। उसे गेलन की गलतियों को ठीक करने का दुख भी था, लेकिन साथ ही वह अपने विचारों पर पूरी दृढ़ता से कायम था। हार्वे के प्रयोगों की लंबी फेहरिस्त थी जिसमें रक्त प्रवाह, हृदय की गति, श्वसन, मस्तिष्क की कार्यप्रणाली, प्लीहा (Spleen), जानवरों में गति और उनकी पीढ़ियां, तुलनात्मक शरीर संरचना, सभी कुछ शामिल था।

हार्वे के जीव विज्ञान व क्रिया विज्ञान के मूलभूत सुधारों ने चिकित्सा पर तीन महत्वपूर्ण प्रभाव डाले। उनमें सबसे प्रमुख था – इस तथ्य की स्थापना कि जीव विज्ञान का कोई भी निष्कर्ष सीधे अवलोकन व सावधानी से किए गए प्रयोगों पर आधारित होना चाहिए। दूसरा था – जीव विज्ञान में जीव प्रक्रियाओं के निष्कर्ष का गुणात्मक

विवेचन। और तीसरा निस्संदेह, शरीर में रक्त परिसंचारण की धारणा, जो क्रांतिकारी विचार था।

हार्वे की इस खोज को वैज्ञानिक क्रांति का नाम सबसे पहले सर विलियम टेम्पल ने अपने लेख 'ऑफ हेल्थ एंड लोंग लाइफ' में दिया। उसने कहा कि हार्वे की रक्त परिसंचारण धारणा चिकित्सा के क्षेत्र में अनेक सामान्य व विशिष्ट नवाचार लाएगी। लेकिन हार्वे की क्रांति का मूल्यांकन करते समय हमें तीन पहलुओं को ध्यान

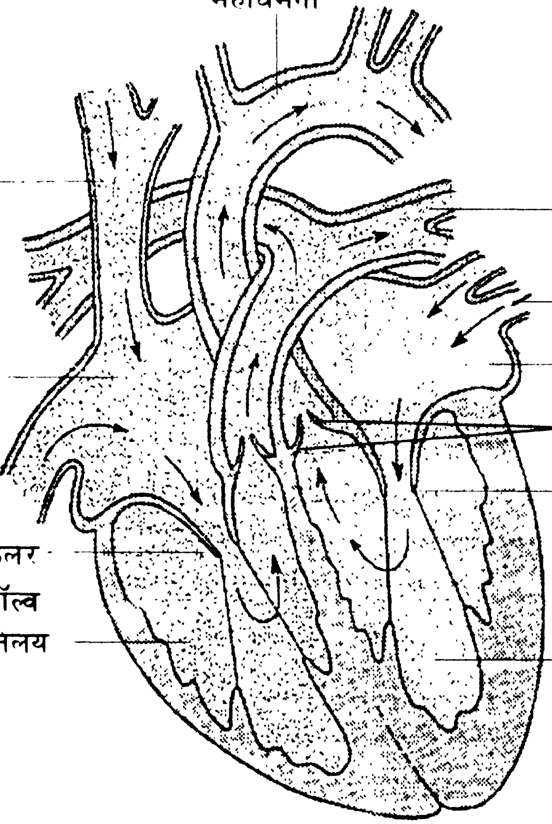


**हृदय की बनावट:** हृदय की खड़ी काट। हार्वे ने देखा कि संकुचन पूरे हृदय में एक साथ नहीं होता है; बल्कि ऊपरी भाग से शुरू होकर निचले भाग तक बढ़ता है। हृदय के दोनों भाग यानी बायां व दायां, दो-दो कोष्ठों में बंटे होते हैं। इन कोष्ठों के बीच एकतरफा वाल्व मौजूद होता है। संकुचन दोनों भागों के ऊपरी कोष्ठों – आलिंद या ऑरिकल में एक साथ होता है जिससे उनमें भरा खून एकतरफा वाल्व द्वारा निचले कोष्ठों – निलय या वेंट्रिकल में जाता है। फिर दोनों निलय एक साथ संकुचित होते हैं जिससे खून धमनियों में धकेला जाता है। यानी कि हृदय एक पंप है जो खून को धड़कनों से धकेलता है। हरेक धड़कन के दौरान हृदय संकुचित होकर फैलता है।

में रखना होगा – जैविक विचारों व विधियों में क्रांति, चिकित्सा के वैज्ञानिक आधार में क्रांति और चिकित्सा प्रणाली में क्रांति। वास्तव में हार्वे ने खुद अपनी खोज के प्रायोगिक उपयोगों के चिकित्सा में योगदान पर एक पुस्तक लिखने के बारे में सोचा था जिसे कभी लिखा नहीं।

दूसरी ओर 17 वीं शताब्दी से ही इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि हार्वे की खोज एक महत्वपूर्ण बौद्धिक उपलब्धि थी। जीव विज्ञान व क्रिया विज्ञान के क्षेत्र में तो अंततः यह निर्विवाद रूप से माना जाता है कि हार्वे की क्रांति ने इन क्षेत्रों में आमूल चूल परिवर्तन किए और नई दिशाएं दिखाईं।

किंतु इसके बाद वह दूसरी झंझटों में फंस गया। इंग्लैंड में गृहयुद्ध छिड़ गया और वह राजा चार्ल्स के समर्थन में था। इस बीच उसने मरटिन कॉलेज में अंडों से चूजों के विकास पर विभिन्न प्रयोग किए। तभी राजा चार्ल्स युद्ध में हार गया और उसे मृत्युदंड दिया गया। इसके साथ ही हार्वे का पद व उसे दी गई सुविधाएं भी समाप्त हो गईं। उसका शेष जीवन काफी दुखदायी रहा। शारीरिक क्रिया विज्ञान में क्रांति के अग्रदूत हार्वे का 79 वर्ष की आयु में 3 जून 1657 को निधन हो गया।

हार्वे ने खून के परिसंचारण के बारे में हमारी समझ ज़रूर बढ़ाई परंतु उसकी मान्यताओं में कई खामियां थीं। उदाहरण के लिए उसने यह ज़रूर कहा था कि शरीर में चार नहीं बल्कि एक ही मूल तत्व है; परंतु उसने भी खून को एकल तत्व माना। हार्वे के अनुसार खून का परिसंचारण प्राकृतिक संपदा के समान वितरण जैसी एक प्रक्रिया है। आज हम जानते हैं कि खून एक तत्व नहीं, बल्कि कई सारे पदार्थों का मिश्रण है। यदि हार्वे के जीवनकाल में अच्छे माइक्रोस्कोप होते तो शायद वह भी अपने विचारों को बदल लेता। माइक्रोस्कोप के अभाव में उसको यह भी मालूम नहीं हुआ कि खून धमनियों से शिराओं तक कैसे पहुंचता है। लोगों ने बाद में ही कोशिकाओं का पता लगाया।

हार्वे की परिकल्पना में एक और कमी थी कि उसने खून को एक संपूर्ण वस्तु के रूप में देखा इसलिए उसे हवा की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण नहीं लगी। दो सौ साल बाद ही रिचर्ड लोवर और जॉन मेयो ने अपने प्रयोगों द्वारा हवा के महत्व को स्थापित किया।

*यह लेख स्रोत के जून 1989 के अंक से लिया गया है।*

**स्रोत** एकलव्य द्वारा संचालित फीचर सर्विस है जो अखबारों को विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी संबंधी लेख उपलब्ध करवाती है।

## शुल्व सूत्र में

# रेखागणित की शुरुआत

### पंडितों और कारीगरों का मिलाजुला प्रयास

**रामकृष्ण भट्टाचार्य**

कोई भी विज्ञान शून्य में पैदा नहीं हो सकता। विज्ञान की सभी शाखाएं, जिसमें गणित भी शामिल है, किसी समूह की कुछ बुनियादी भौतिक और बौद्धिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अस्तित्व में आती हैं। हम पाषाणयुग के लोगों में धातुविज्ञान की बात नहीं सोच सकते। इसी प्रकार रेखागणित और बीजगणित जैसी गणित की शाखाएं ज़्यादा विकसित समाज से संबंध रखती हैं।

हम हड़प्पा के निवासियों के ज्ञान के सैद्धांतिक पक्ष के बारे में कुछ नहीं जानते; फिर भी हम यह विश्वास कर सकते हैं कि प्राचीन बेबीलोन और मिस्र के समान भारत में भी राजगीर और बढ़इयों का अपना खुद का रेखागणित था जो चीज़ों को बनाते, गढ़ते विकसित हुआ था। रेखागणित के दो मूल तत्व, ईंट बनाना और सरल रेखीय तथा वक्ररेखीय आकृतियां (मुख्यतः बहुभुज और वृत्त) बनाने वाले उपकरण, उत्तर-पश्चिम भारत में 2500 ई.पू. से ही विद्यमान थे।

दूसरा चरण वैदिक लोगों से शुरू होता है जो 1500 ई.पू. के करीब

आए। तथापि, ज़हां तक रेखागणित का संबंध है हम एक नई शुरुआत देखते हैं। कम्पास या स्केल जैसे तैयारशुदा किसी उपकरण के स्थान पर हम बांस के शंकु और रस्सी का टुकड़ा (शुल्व) पाते हैं। (इसे रज्जु भी कहा जाता था)।

## वेदियां अलग-अलग आकार की

वैदिक लोगों के रेखागणितीय ज्ञान का पहला प्रमाण 'ब्राह्मण ग्रंथों' में मिलता है, जो वेदों के गद्यात्मक सहयोगी ग्रंथ हैं। वे विभिन्न प्रकार के यज्ञों का वर्णन करते हैं। सोमयाग नामक कर्मकाण्ड के सिलसिले में विशेष प्रकार की वेदियों का निर्माण करना पड़ता था। हवन की वेदियों के सामने खड़े रहकर या बैठकर जब पुरोहित कर्मकाण्ड संपन्न करता था तो मंत्रों का उच्चारण या गायन किया जाता था। ये वेदियां अलग-अलग आकार की ईंटों के द्वारा बनाई जाती थीं।

आज यह एक पहेली जैसा लगता है क्योंकि वैदिक काल के लोग गांवों में रहते थे, उनके मकान मिट्टी और लकड़ी के बनते थे, भट्टी में पकाई ईंटों के नहीं। पर अग्नि वेदी के निर्माण के लिए ईंटें ज़रूरी थीं। यह अनुमान

### विविध किस्म की वेदियां

**प्रउगचिति:** 'त्रिकोण वेदी', प्रउग शब्द का मूल अर्थ 'रथ के डंडे के सामने का हिस्सा' जो आकार में तिकोना होता था।

**उभयत: प्रउगचिति:** दोनों तरफ तिकोनी वेदी, यानी समचतुर्भुज आकार की।

**रथचक्र चिति:** रथ या बैलगाड़ी के चक्के के आकार की वेदी, अर्थात आरीयुक्त वृत्त।

**परिचाय्य चिति:** गोल वेदी।

**श्येन (या सुपर्ण) चिति:** बाज़ के आकार की वेदी।

**कंक चिति:** बगुले के आकार की वेदी।

**कूर्मचिति:** कछुए के आकार की वेदी।

**द्रोणचिति:** दोने के आकार की वेदी।

**श्मशान चिति:** चिता के आकार की वेदी।

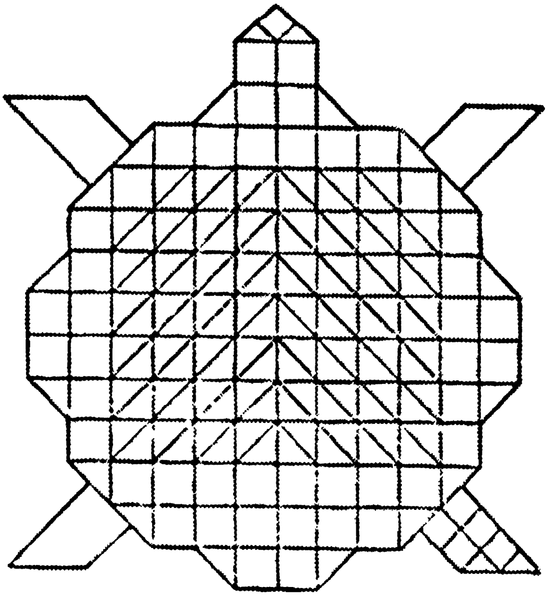

**कूर्मचिति:** कछुए के आकार की वेदी। बाईं तरफ के चित्र में इस वेदी की एक परत बनाई गई है जिसमें अलग-अलग आकृतियों की ईंटों के इस्तेमाल को दिखाया गया है। नीचे के चित्र में कूर्मचिति के पूरी तरह बन जाने के बाद की स्थिति को प्रदर्शित गया है।

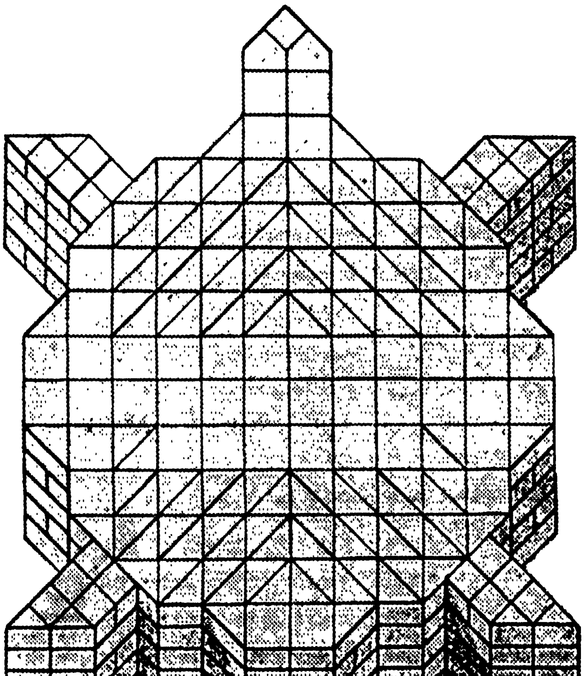

ठीक ही लगता है कि ईंटों का उपयोग पूर्व वैदिक और वैदिक संस्कृति की निरंतरता ज़ाहिर करता है। संभवतः हड़प्पा के पुरोहितों ने इस खास किस्म के वैदिक कर्मकाण्ड में ईंटों के उपयोग का रिवाज शुरू करवाया होगा।[1]

वेदियां भी कई प्रकार की बनाई जाती थीं। कुछ नाम रेखागणितीय अवधारणा के प्रारंभिक सिद्धांत प्रकट करते हैं।

अलग-अलग आकार की ईंटें मिट्टी को पकाकर बनाई जाती थीं। विभिन्न आकार की ईंटों की निश्चित संख्या से एकदम सही आकार बन जाता था। वेदियां सुन्दरता के हिसाब से भी सुरुचिपूर्ण थीं।

ईंटों के इस प्रकार के इस्तेमाल के रिवाज से वैदिक काल के लोगों ने तथाकथित पाइथागोरस के इस सिद्धांत को खोजा कि समकोण त्रिभुज के आधार व लम्बवत भुजा पर बने वर्ग का योग, कर्ण पर बने वर्ग के बराबर होता है।[2] पहली तीन निश्चित संख्याएं जो यह गुण दर्शाती हैं – 3, 4 और

**रथचक्र चिति:** रथ या बैलगाड़ी के चक्के के आकार की वेदी, अर्थात आरायुक्त वृत्त। पहले चित्र में रथचक्र चिति को बनाते समय की एक परत को दिखाया गया है ताकि इस बात का अंदाज़ लग सके कि अलग-अलग ईंटों का इस्तेमाल किस तरह किया जाता था। दाहिनी ओर के चित्र में रथचक्र चिति के बन जाने के बाद का काल्पनिक चित्रण है।

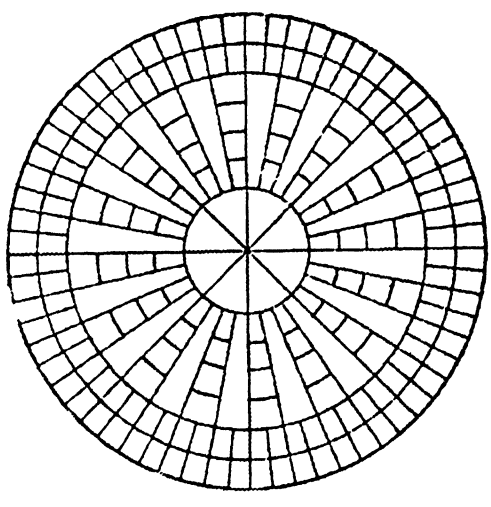

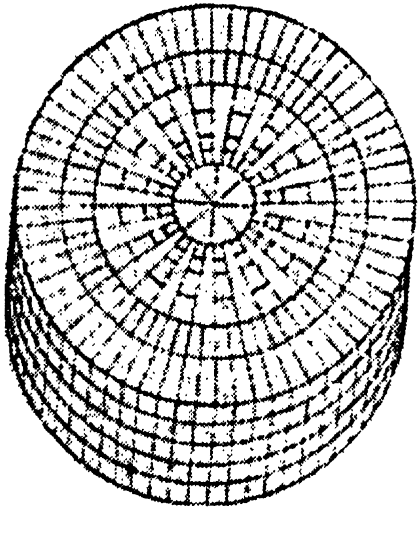

**श्मशान चिति** - चिता के आकार की वेदी का चित्रण।

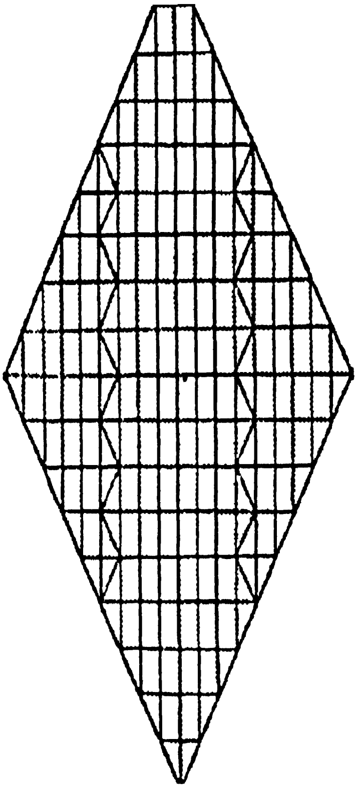

**उभयत: प्रउगचिति** - दो त्रिकोणों से बनी चतुर्भज वेदी। प्रउग शब्द का मूल अर्थ है 'रथ के डंडे के सामने का हिस्सा' जो आकार में तिकोना होता था।

5 ($3^2 + 4^2 = 5^2$) और दूसरे ऐसे अंकों के रूप में (5, 12, 13; 7, 24, 25; 40, 96, 104, आदि) वेदियों का आकार बताने वाली इबारत में इस साध्य का बुनियादी विचार मिलता है।

ये नियम अत्यंत संक्षिप्त सूत्रों के रूप में बनाए गए हैं। ये कृतियां 'शुल्व सूत्र' के नाम से जानी जाती हैं जो कि श्रौत सूत्र का हिस्सा है।

'शुल्वसूत्र विभिन्न पुरोहित परिवारों के धार्मिक ग्रंथों का हिस्सा बन गए। हमारे पास बोधायन शुल्व सूत्र जैसे ग्रंथ हैं, जो बोधायन श्रौत सूत्र का हिस्सा है। इसी प्रकार आपस्तंभ, कात्यायन और मानव शुल्व सूत्र हैं। हमें कुल सात शुल्व ग्रंथों की जानकारी है लेकिन ऊपर जिन चार का ज़िक्र किया गया है उन्हें छोड़कर बाकी ग्रंथ

या तो दोहराव हैं या फिर खास उपयोगी नहीं हैं।

## रेखागणित का उद्गम: एक बहस

शुल्व ग्रंथों में उल्लेखित रेखागणित का विस्तार से अध्ययन करने के पहले हम एक मुद्दे को तय करना चाहते हैं। यदि शुल्वसूत्र रेखागणित का स्रोतग्रंथ माना जाए तो क्या इससे यह सिद्ध होता है कि धर्म या जादू ने भारत में रेखागणित के जन्म (या कहें कि पुनर्जन्म) में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी? एक प्रसिद्ध जर्मन भारतविद जॉर्ज थिबाट, जिन्होंने शुल्व का विस्तृत विवरण सन् 1875 में लिखा, बताते हैं कि:

"यह सबको पता है कि भारतीय जीवन और उसकी सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाएं हमेशा ही धर्म के प्रभाव में रही हैं। पर जब हम ज्ञान के उन क्षेत्रों के उद्गम का कारण जानना चाहते हैं जिसे भारतीयों ने इतनी उल्लेखनीय सफलता से विकसित किया है, तो हम उसे धार्मिक विश्वासों और उपासना में खोजने पर विवश होते हैं।"[3]

उन्होंने अपने मत के समर्थन में रेखागणित का उदाहरण दिया।

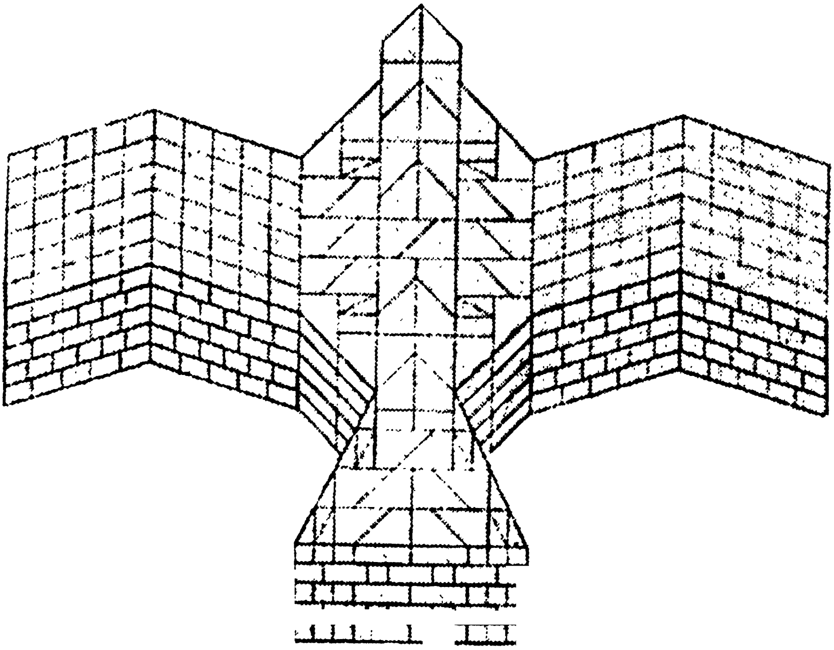

**श्येन (या सुपर्ण) चिति:** बाज़ के आकार की वेदी।

हाल ही में, संस्कृत के एक विद्वान और दार्शनिक फ्रिट्स स्टाल ने लॉर्ड रेग्लान का मत पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। 1949 में लॉर्ड रेग्लान ने (स्टाल के अनुसार) 'एकदम मौलिक और नया' दावा किया, जो इस प्रकार है:

"इस बात की बहुत संभावना है कि उन खास खोजों, जिन पर हमारी सभ्यता आधारित है, के उद्‌गम को फारस की खाड़ी के शीर्ष के पास खोजा जा सकता है। वहां जो प्रमाण मिले हैं उनसे पता चलता है कि इन्हें होशियार पुरोहितों ने धार्मिक कर्मकाण्डों को सुविधाजनक रूप से संपन्न करने के लिए बनाया था।"

"संभवत: बलि देने में सुविधा हो इसके लिए जानवरों को पहले पालतू बनाया गया और यह भी संभव है कि हल का पहले-पहल इस्तेमाल ज़मीन को प्रतीक के रूप में उपजाऊ बनाने के लिए किया गया; पहला पहिया शायद सूरज को अपने रास्ते पर रखने का एक तरीका रहा होगा; और धातु का काम स्वर्ण में सूर्य की प्रतिकृति बनाने से शुरू हुआ होगा; पहले धनुष और बाण ने दूर खड़े दुश्मन को प्रतीकात्मक रूप में नष्ट करके विजय को सुनिश्चित किया होगा; मृत शरीर को सुरक्षित रखने (ममी) से मृत राजा कर्मकांड के लिए जीवित रह पाता था; और पतंग आत्मा को आकाश पहुंचाती थी।"

"इन सभी सुझावों के समर्थन में कुछ प्रमाण तो हैं, और उनका कुल प्रभाव समग्र रूप से इस सिद्धांत को मज़बूत बनाता है। सिद्धांत यह है कि सभ्यता का उदय कर्मकाण्ड से हुआ, हालांकि इस बात को स्थापित करने के लिए और ज़्यादा प्रमाणों की ज़रूरत पडेगी। परन्तु जो वैकल्पिक सिद्धांत हैं उनके समर्थन में कोई प्रमाण नहीं हैं।"[1]

यह सब चाहे जितना भी भरोसे लायक दिखे, खासकर भारत के संबंध में, हम यह बताना चाहेंगे कि भारत में रेखागणित का कर्मकाण्डीय उद्‌गम एकदम काल्पनिक है और उसका कोई आधार नहीं है। ईंट बनाने की कला मकान बनाने के मकसद से पहले उत्तर-पश्चिम भारत के शहरों में विकसित हुई, जैसा कि 1920 के दशक से किए गए उत्खननों में कितने ही शहरों के अवशेषों से प्रकट होता है। ये सारे शहर वैदिक काल के पहले के थे और उस समय के निवासियों का जीवन बहुत अलग किस्म का था।

दूसरे, खुद शुल्व सूत्रों में हम यह पढ़ते हैं कि शुल्व विशेषज्ञ ऐसा होना चाहिए जो अपने विषय के प्रति समर्पित हो, संख्याओं को भाग देने में माहिर हो, जिसे दूसरों के विषय में रुचि हो और हमेशा कारीगरों और राजगीरों से सीखता हो।

शास्त्र बुद्धया विभागज्ञ:
परा शास्त्र कुतूहला:।
शिल्पिभ्य: स्थपतिभ्यश्च
आददीतामती: सदा[5]

इस प्रकार ईंटों को एक के ऊपर एक रखने वाले विशेषज्ञ को अन्य कारीगरों से, खासकर दस्तकारों और राजगीरों से सीखते रहना चाहिए।

कारीगर और राजगीर कितने महत्वपूर्ण थे यह महाभारत के आदिपर्व की एक घटना से पता चलता है। जब राजा जनमेजय ने नाग यज्ञ करने का निश्चय किया तो उसने मंत्रों के ज्ञाता ब्राह्मणों से कहा, "मैं उस यज्ञ के लिए तैयारी करूंगा। मुझे वे चीज़ें बताओ जिनकी इसमें ज़रूरत है।" और राजा के ऋत्विजों, श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने, जो वेदों के ज्ञाता और विद्वान थे, शास्त्रों के अनुसार यज्ञ की वेदी के लिए भूमि को नापा।[6]

किन्तु कुछ गड़बड़ हो गई। और नाग यज्ञ शुरू होने के पहले ही यज्ञ के विनाश की चेतावनी मिली। हुआ यह कि जब यज्ञ की वेदी का निर्माण किया जा रहा था तब अत्यन्त चतुर और नींव भरने में कुशल सूत जाति के एक पेशेवर कारीगर, जो पुराणों का अच्छा ज्ञाता था, ने कहा, "जिस भूमि पर और जिस समय यज्ञ की वेदी की नाप की गई, वह बताती है कि यज्ञ पूरा नहीं होगा और ब्राह्मण इसके कारण होंगे।"

यह कहानी खुद एक अंधविश्वास की ओर इशारा करती है इसमें सन्देह नहीं है। पर यह बात ध्यान रखने की है कि ब्राह्मणों ने समय और नाप की गलत गणना कर ली जबकि एक अब्राह्मण यानी एक तथाकथित नीची जाति के व्यक्ति (कौटिल्य अर्थशास्त्र 3.7.28 और मनुस्मृति 10.17 और अन्य के अनुसार सूत एक वर्णसंकर जाति है) ने गलती पकड़ ली और भावी खतरे की भविष्यवाणी कर दी।

इसी प्रकार जब युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ करने की योजना बनाई, तब उसका भाई भीम यज्ञ भूमि तैयार करने और इमारतें बनाने में कई कुशल लोगों के साथ गया। वह अपने साथ कई ब्राह्मणों को भी ले गया जो यज्ञ के सभी कर्मकाण्डों के अच्छे जानकार थे।[7] राजगीरों और ब्राह्मणों का अलग-अलग उल्लेख ध्यान देने योग्य है। इसी खण्ड में हम पढ़ते हैं, "...फिर सभी कारीगरों और वास्तुकारों ने यज्ञ की सभी तैयारियां करने के बाद इसके बारे में राजा युधिष्ठिर को सूचना दी।" यह मानना पड़ेगा कि इन लोगों को अतिथियों का आवास बनाने का भी आदेश दिया गया था, लेकिन ब्राह्मणों के साथ उनकी यज्ञ के स्थान में उपस्थिति मस्तिष्क और हाथ की एकता प्रकट करती है।

रामायण के बालकाण्ड में भी हमें बताया जाता है कि राजा द्वारा किए जा रहे यज्ञ के सिलसिले में "तब उन्होंने (वशिष्ठ ने) अनुभवी और यज्ञ की क्रिया के अच्छे जानकार ब्राह्मणों से व निर्माण की कला में कुशल लोगों से बातचीत की। उन्होंने कर्मकाण्ड ग्रंथों के भरोसेमन्द कारीगरों, बढ़इयों, खुदाई करने वालों, ज्योतिषियों, कलाकारों, नर्तकों, अभिनेताओं एवं ईमानदार और कर्मकांड ग्रंथों में पारंगत विद्वानों से कहा – सज्जनो, राजा की आज्ञा के अनुसार यज्ञ का काम शुरू करो। तुरन्त कई हज़ार ईंटें लाओ।"[8]

यहां भी आवासों के निर्माण के लिए कारीगरों और शिल्पियों की ज़रूरत पड़ती है। पर सिर्फ यही उनका काम नहीं था। अगले ही खण्ड में हम पढ़ते हैं – "शिल्पियों द्वारा बढ़िया बनाए गए मज़बूत, अष्टकोणी और चिकने स्तंभ कर्मकाण्ड के नियम के अनुसार जगह पर रख दिए गए। ईंटें निर्धारित तरीके और निर्धारित नाप से बनाई गईं। अग्निकुण्ड कर्मकाण्ड की गणना के विज्ञान में कुशल ब्राह्मणों द्वारा निर्मित किया गया।"[9]

## कारीगरों-पुरोहितों का सहयोग

इस प्रकार हम शुल्व ग्रंथों को ईंट बनाने वालों, राजगीरों और अन्य कारीगरों तथा पुरोहितों के बीच सहयोग की उपज मान सकते हैं। कारीगरों के शिल्प को आत्मसात करके ही शुल्व विज्ञान (जैसा कि मानव और मैत्रायण शुल्व सूत्र इसे कहते हैं) का जन्म हुआ।[10] ईंटों की ज़रूरत पहले घर बनाने के लिए हुई और उसके बाद ही वे कर्मकाण्ड के लिए इस्तेमाल की गईं। इसका उल्टा नहीं हुआ।

इसलिए हम लॉर्ड रेग्लान के द्वारा प्रस्तावित विचार को खारिज कर देते हैं। हम इस आधार विचार से शुरू करते हैं कि इसके पहले कि समाज कर्मकाण्ड और यज्ञ के बारे में सोच पाता, उसे ज़िन्दा रहने के बारे में सोचना था। "हमें मानव के अस्तित्व, यानी कि पूरे इतिहास के अस्तित्व को सबसे बुनियादी ज़रूरत से शुरू करना चाहिए – इतिहास रचने के लिए सबसे ज़रूरी है कि मनुष्य ज़िंदा रह पाए; और जीवन के लिए और बातों से भी ज़्यादा ज़रूरी है खाना-पीना, रहने के लिए जगह, पहनने के लिए कपड़े और भी ऐसी बहुत-सी बुनियादी ज़रूरतें। इसलिए सबसे पहला ऐतिहासिक कृत्य है इन सब ज़रूरतों की पूर्ति के लिए उत्पाद के तरीके विकसित करना। बेशक यह एक ऐतिहासिक कृत्य है, इतिहास की बुनियादी ज़रूरत, जिसे हज़ारों साल पहले पूरा करना पड़ता था और आज भी मनुष्य के जीवन को बरकरार रखने के लिए प्रतिदिन घंटे-दर-घंटे

पूरा करना ही पड़ता ।''।।

इसी प्रकार कर्मकाण्डों में प्रयुक्त होने के पहले हल का उपयोग भूमि को जोतने के लिए किया गया होगा। और कर्मकाण्डों में प्रयुक्त होने के पहले धातु के बर्तनों और हथियारों का निर्माण हुआ होगा। हम किसी भी प्रकार इस सरल और स्वयंसिद्ध सत्य मे मुंह नहीं मोड़ सकते, चाहे लॉर्ड रेग्लान और उनके समर्थक हमें ऐसा करने के लिए क्यों न कहें।

मस्तिष्क और हाथ को पहले पेट की ज़रूरत पूरी करनी थी। कर्मकाण्ड भी पर्याप्त भोजन सुनिश्चित करने और प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा देने के लिए बने थे। लेकिन एक खास चरण पर मस्तिष्क और हाथ की एकता खत्म कर दी गई क्योंकि जिन लोगों ने बुनियादी औज़ार और चीज़ों को बनाने का तरीका उपलब्ध कराया था उन्हें शिक्षा से वंचित कर दिया गया। इस दुर्भाग्यपूर्ण विभाजन ने भारत में विज्ञान और तकनॉलॉजी के ह्रास का मार्ग प्रशस्त कर दिया।[12]

इस समझ के साथ हम अब शुल्व सूत्रों की तरफ बढ़ेंगे।

(क्रमश:)

**रामकृष्ण भट्टाचार्य:** आनंद मोहन कॉलेज, कलकत्ता के अंग्रेज़ी विभाग में रीडर तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी अध्ययन पाठ्यक्रम में अतिथि लेक्चरर। विज्ञान लेखन में रुचि।

**अनुवाद: सुरेश मिश्र।** इतिहास के पूर्व प्राध्यापक। एकलव्य में कार्यरत।

## फुटनोट एवं संदर्भ ग्रंथ:


1. जी. थिबाट, मेथेमेटिक्स इन द मेकिंग इन इंडिया, कलकत्ता, के. पी. बागची एंड कम्पनी, 1984 में देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय द्वारा लिखी गई भूमिका। पृ. 4 से 16
2. टी. ए. सरस्वती अम्मा, ज्योमेट्री इन एनशियंट एंड मिडिएवल इंडिया, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, 1999। पृ. 16–22
3. थिबाट, नोट 1, पृ. 3
4. एफ. आर. सी. रेग्लान, हाऊ केम सिविलाइज़ेशन?, लंदन, 1949, पृ. 176
5. द शुल्व सूत्र ऑफ कात्यायन, संपादित: गोपाल शास्त्री नेने, बनारस, द चौखंबा संस्कृत सीरिज़ ऑफिस, 1936, पृ. 36 एवं 38
6. द महाभारत, पूना क्रिटिकल एडीशन, आदिपर्वन, केन्टो 47; वलगेट संस्करण, केन्टो 51
7. वही। अश्वमेधिकापर्वण, क्रिटिकल एडीशन, केन्टो 86; वलगेट एडीशन, केन्टो 85
8. द रामायन, बड़ौदा क्रिटिकल एडीशन, बालकांड, केन्टो 12; वलगेट एडीशन, केन्टो 13
9. वही। क्रिटिकल एडीशन, केन्टो 13; वलगेट एडीशन, केन्टो 14
10. द साइंस ऑफ शुल्वा, बी. बी. दत्ता, कलकत्ता, द यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, 1932, पुन: प्रकाशन 1991, पृ. 8
11. कार्ल मार्क्स एंड फेडरिक एंगेल्स, द जर्मन आयडियोलॉजी, मॉस्को, प्रोग्रेस पब्लिशर्स, 1968, पृ. 39
12. "प्राचीनकाल में लोगों को पता था कि कारीगर यदि अपने सैद्धांतिक और व्यावहारिक ज्ञान को परस्पर नहीं जोड़ेगा तो वह अपने शिल्प की उन्नति नहीं कर पाएगा। इस प्रकार विट्वियस और बाद के लेखकों ने वास्तुविद का वर्णन करते हुए कहा है कि उसे 'योजनाकार वास्तुविद और सर्वेक्षणकर्त्ता' होना चाहिए। ऐसे इंजीनियरों को प्रमुख शिल्पकार मानते हुए उनकी ज़रूरत को मान्यता तो मिली थी पर उन्हें शिक्षित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाए गए। रोमन साम्राज्य के पतन के बाद ऐसे रुझान एकदम बंद हो गए और कारीगरों को खुद शिक्षित होने के लिए छोड़ दिया गया। इस प्रकार दसवीं सदी के बाद वास्तुविद का उल्लेख अक्सर ईंट बनाने वाले के रूप में किया गया। दूसरे शब्दों में वह सिर्फ कारीगरों का उस्ताद था। चौदहवीं सदी में हम वास्तुविद शब्द पाते हैं जिसका उल्लेख बार-बार डिजाइनर, योजनाकार और निर्माण कार्य का आयोजन करने वाले के रूप में किया गया है।" ए हिस्ट्री ऑफ साइंस एंड टेक्नॉलॉजी। जिल्द 1, हारमोन्सवर्थ, प्रकाशक: पेंगुइन बुक्स, 1963, पृष्ठ 146

## करना, गढ़ना और बूझना

- खेल–खेल में
- कबाड़ से जुगाड़
- खिलौनों का बस्ता
- माचिस की तीलियों के खेल
- वर्ग पहेली
- एक आधार अनेक आकार
- तितलियाँ और अन्य खेल
- खेल खिलौने

## पढ़ना और गाना

लोमड़ी और ज़मीन
आज़ादी की नुक्ती
प्यारा लड्डू
हमको फिर छुट्टी
कहानी संग्रह
कविता संग्रह
नजानू के रंग
हड्डी
बाँकी–बाँकी धूप
फर फर उड़ी पतंग
छुटकी गिलहरी

## चित्रकथाएँ

- रूसी पूसी
- चूहे को मिली पेंसिल
- बिल्ली के बच्चे
- मैं भी
- नाव चली
- भालू ने खेली फुटबॉल
- अनोखी प्रदर्शनी
- टिपिक...पाँ...भर्र

- पास या नापास
- पत्ते ही पत्ते

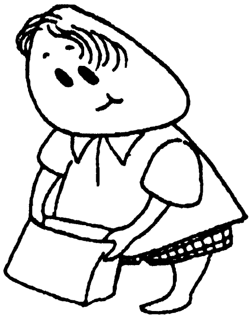

- बाल वैज्ञानिक – कक्षा 6, 7, 8
- सामाजिक अध्ययन – कक्षा 6, 7, 8
- खुशी–खुशी – कक्षा 1 से 5
- बच्चे असफल कैसे होते हैं
- सीखना–सिखाना
- सामाजिक अध्ययन शिक्षण : रपट
- विज्ञान क्या है
- इतिहास क्या है
- प्रश्न बैंक

**जन विज्ञान**

- टिकाऊ खुशहाली
- बोल अरी ओ धरती बोल
- जवाब दर सवाल
- जनविज्ञान का सवाल
- बेटी करे सवाल
- बोलो तुम क्या चुप बैठोगे

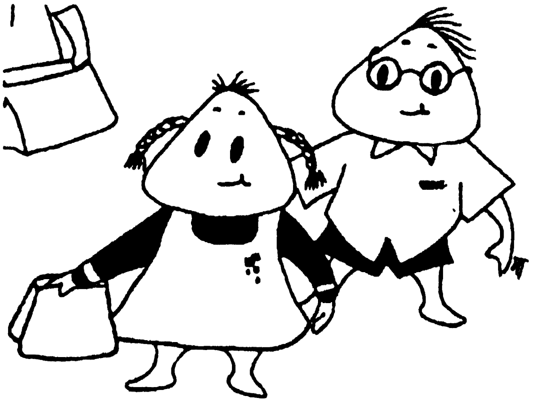

**की नियमित**

**चकमक**

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

**वार्षिक सदस्यता शुल्क रु. 100.00**

**स्रोत**

विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी फीचर्स

**वार्षिक सदस्यता शुल्क रु. 150.00**

**संदर्भ**

द्वैमासिक पत्रिका

**वार्षिक सदस्यता शुल्क रु. 50.00**

*विस्तृत जानकारी के लिए सम्पर्क:*

**एकलव्य**, ई-1/25 अरेरा कॉलोनी,
भोपाल – 462016 म.प्र.
फोन-563380, फैक्स-561703

# जादुई गुब्बारा

चंपालाल कुशवाहा

पिछले अंक में 'हवा का दबाव' लेख पढ़ा। लेख के अंत में गुब्बारे-बोतल वाला एक प्रयोग दिया गया था। मैं इसी प्रयोग के बारे में अपने अनुभव बताना चाहता हूं।

पिछले साल मुंबई के मरीन ड्राइव स्थित बाल भवन में आयोजित 'बाल विविधा' नामक एक कार्यक्रम के दौरान हम तीन-चार साथी विज्ञान के बहुत से छोटे-छोटे खेल लेकर वहां गए थे। हमारे इन खेलों में यह बोतल-गुब्बारे वाला खेल भी था जिसे हमने नाम दिया था – जादुई गुब्बारा।

जब बच्चे या अन्य दर्शक इसे देखकर पूछते कि यह क्या है तो हमारा जवाब होता – जादुई गुब्बारा। हम उन्हें बोतल देकर गुब्बारा फूलाने के लिए कहते तो वे उसी नली में फूंक मारते थे जिस नली से गुब्बारा जुड़ा होता था क्योंकि हमेशा की तरह वे यही सोचते थे कि गुब्बारा तभी फूलेगा जब उसमें फूंक मारी जाए।

अब दर्शकों से कहा गया कि गुब्बारे में फूंक मारे बिना उसे फूलाकर दिखाना है तो लोग भौंचक्के रह गए। कुछ लोग हमारी बात को मज़ाक समझने लगे तो कुछ लोगों ने उस नली में फूंककर देख लिया जिसमें गुब्बारा नहीं लगा था, लेकिन इस सब के बावजूद भी गुब्बारा ज्यों-का-त्यों रहा। अब हमारे एक साथी ने बिना गुब्बारे वाली नली में फूंक मारे जब गुब्बारे को

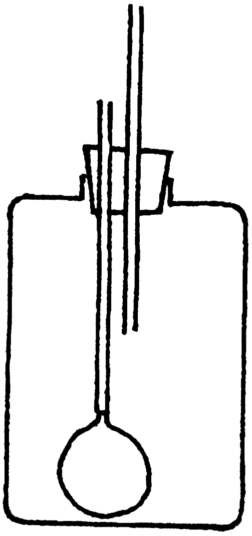

चित्र:1 बोतल और गुब्बारे की जमावट।

फूलाकर दिखा दिया तो लोग हमें जादूगर समझने लगे और इसका राज़ पूछने लगे।

हमने अपनी समझ के अनुसार उन्हें बताया कि दूसरी नली से मुंह लगाकर हम बोतल की हवा को खींचते हैं, जिससे बोतल में हवा का दबाव कम हो जाता है; और इस रिक्त स्थान को भरने के लिए बाहर की हवा गुब्बारे वाली नली के माध्यम से बोतल में प्रवेश करती है और गुब्बारा फूल जाता है। गुब्बारा कितना फूलेगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि कितनी हवा आप बोतल में से खींच पाते हैं।

गुब्बारा फूल जाने के बाद दूसरी समस्या थी कि जैसे ही आप नली से मुंह हटाते हो गुब्बारे में से हवा निकल जाती है और गुब्बारा पिचक जाता है। अगला सवाल था कि अब यदि गुब्बारे को फुलाए रखना हो तो क्या करना चाहिए? इस सवाल का जवाब दर्शकों ने आसानी से खोज लिया कि गुब्बारे वाली नली का मुंह बंद कर दिया जाए। लेकिन जल्दी ही उन्हें यह बात भी समझ में आ गई कि गुब्बारे को फुलाकर, जिस नली से हम बोतल की हवा को खींच रहे हैं, उस नली का मुंह बंद कर दें तब भी गुब्बारा फूला रह सकता है।

दर्शकों के एक समूह को हमने यह सब दिखाने के बाद कहा कि बोतल का ढक्कन खोले बगैर और बिना किसी अन्य उपकरण की सहायता लिए बोतल में पानी भरकर दिखाना है। दर्शक एक बार तो विस्मित हो गए कि बोतल में पानी किस तरह भरा जाए! लेकिन एक-दो लोगों ने पिछली बार किए प्रयोग की तर्ज पर पहले गुब्बारे को फूलाया, फिर गुब्बारे वाली नली को बंद किया और गुब्बारा रहित नली

को पानी में डुबो दिया। अब गुब्बारे वाली नली को खोल दिया जिससे पानी बोतल के भीतर आने लगा। थोड़ी देर में यह समझ में आया कि गुब्बारा रहित नली से हवा खींचकर फिर इसी नली को बंद करके इसे पानी में डुबोया जाए और नली का मुंह खोल दिया जाए तब भी पानी बोतल में आने लगता है। इन दोनों तरीकों में बोतल के भीतर हवा का दबाव कम हो जाता है जिसे भरने के लिए पानी बोतल में घुसता है।

अब तक हमारा जादुई गुब्बारा लोगों के आकर्षण का केन्द्र बन गया था। अगला सवाल यह उठ खड़ा हुआ कि बोतल के भीतर का पानी किस तरह बाहर निकाला जाए? दर्शकों में से कुछ लोग इस गुब्बारे के खेल को समझ चुके थे। एक दर्शक ने गुब्बारे में हवा फूंकना शुरू किया जैसे-जैसे गुब्बारे का आकार बढ़ने लगा बोतल में से पानी बाहर निकलने लगा; क्योंकि बोतल के भीतर हवा का दबाव बढ़ने पर गुब्बारा रहित नली में से हवा और पानी बाहर निकलने लगा।

बातों ही बातों में यह सवाल हमारे एक साथी ने रखा कि बोतल में पानी है और गुब्बारा रहित नली को बिना छुए आपको गुब्बारा फुलाकर दिखाना है। क्या किया जा सकता है? इस बार तो हम लोग भी सोच में डूब गए। दर्शकों में से कोई अपनी राय देता तो कभी हमारे साथियों में से कोई समस्या को सुलझाने की कोशिश करता। हम अभी इसी उधेड़बुन में फंसे हुए थे कि तभी मुझे एक उपाय सूझा। मैंने बोतल को इतना तिरछा किया कि बोतल का पानी आसानी से बाहर निकल सके। जैसे-जैसे पानी बाहर निकलने लगा गुब्बारा फूलने लगा। अब मेरी भी समझ में यह बात आ गई थी कि बोतल में से पानी निकलने के कारण बोतल में हवा का दबाव कम हो रहा था, और इस दबाव के अंतर को पाटने के लिए गुब्बारे वाली नली से बाहर की हवा भीतर आने की कोशिश कर रही थी और गुब्बारे को फुला रही थी। अब हमारे साथियों और दर्शकों के चेहरे पर संतोष के भाव दिखने लगे थे।

**चंपालाल कुशवाहा:** हिग्नखेड़ा गांव में बच्चों के एक बाल समूह का संचालन करते हैं। साथ ही एक साइक्लोस्टाइल बाल पत्रिका 'बाल प्रयास' का प्रकाशन भी करते हैं।

# बच्चे और उनके खिलौने

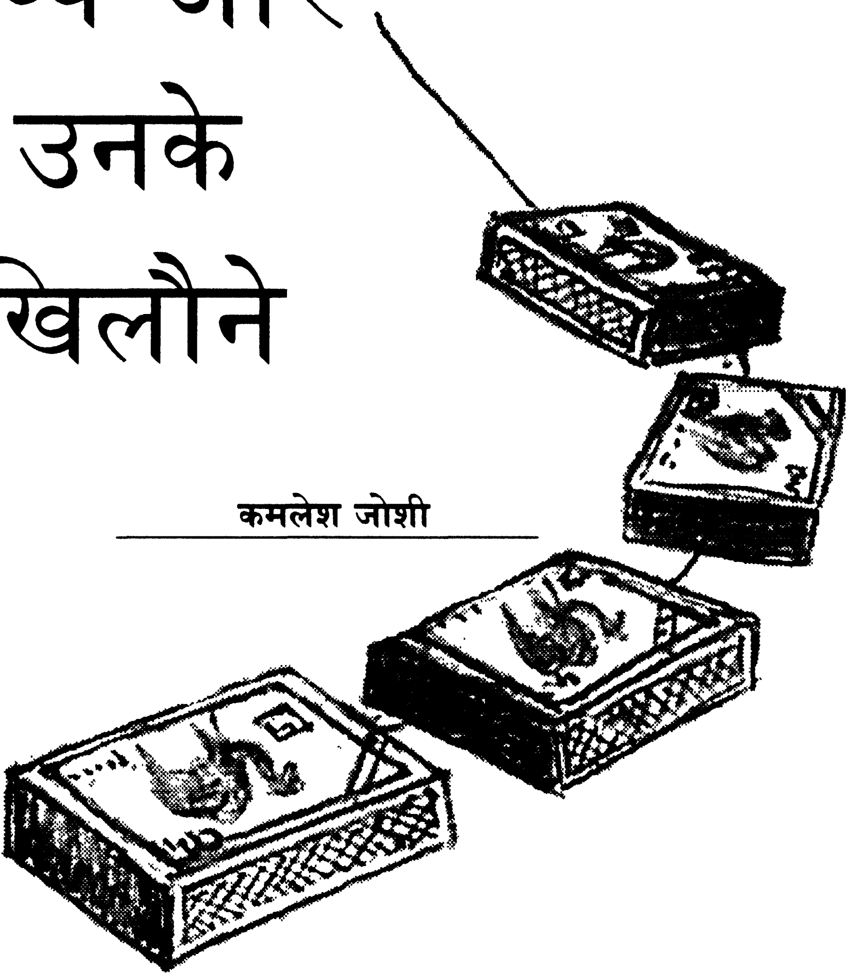

कमलेश जोशी

बच्चे और खिलौने का संबंध सदैव से ही रहा है। हम यह भी कह सकते हैं कि खिलौनों के बिना हम बच्चों की दुनिया की कल्पना भी नहीं कर सकते। चाहे हम बच्चों को खिलौने खरीदकर दें या न दें बच्चे अपने लिए किसी-न-किसी चीज़ (चाहे वे टूटे-फूटे डिब्बे हों या इसी तरह की अन्य सामग्री) को खिलौने की शक्ल दे ही देते हैं।

बच्चों को एकदम छुटपन से ही मुंह से या खिलौनों से अजीबो-गरीब आवाज़ें निकाल कर हम बहलाते हैं और बच्चे बहल भी जाते हैं। यही बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते जाते हैं, खुद भी चीज़ों को जोड़-तोड़कर खिलौने

बनाने में अपनी रचनात्मक ऊर्जा का खूब इस्तेमाल करते हैं। इसलिए भी यह ज़रूरी हो जाता है कि बच्चों की इस रचनात्मक ऊर्जा को उभारने के लिए उन्हें भरपूर मौके दिए जाएं।

बच्चे और खिलौनों का संबंध, उनका परिवेश तथा उनके द्वारा खिलौने बनाने की प्रक्रिया आदि चीज़ों पर गौर करें तो हमें यह समझने का मौका मिलता है कि बच्चे खिलौने बनाते हुए क्या-क्या सीखते हैं और कैसे सीखते हैं?

## खिलौने किस्म-किस्म के

पहले हम गौर करें कि बच्चे अपने रोज़मर्रा के जीवन में कौन-कौन-सी चीज़ें बनाते हैं? इसके लिए अगर हम अपने अतीत में गोता लगाएं और अपने बचपन की दुनिया में झांकें तो तरह-तरह के खिलौनों का खज़ाना हमारी स्मृति में से निकलकर आता है – ढेर सारी माचिस की खाली डिब्बियों को बिल्कुल सरल तरीके से जोड़कर बनती रेलगाड़ी, खाली सिगरेट की डिब्बी की पिस्तौल, कागज़ से बनाई जाने वाली ढेरों चीज़ें जैसे नाव, हवाई जहाज़, तितली, नाग आदि क्या-क्या नहीं बनाते थे इन सब से।

किसी समय हमारे गांवों में मिट्टी से बहुत सारे खिलौने बनाए जाते थे। धीरे-धीरे उनका प्रचलन अब समाप्त हो रहा है। लेकिन कुछ इलाकों में ये अब भी प्रचलित हैं। मिट्टी के इन खिलौनों को आज भी गांवों-कस्बों के मेलों में देखा जा सकता है। इनके बारे में सोचते हुए हमें प्रेमचन्द की कहानी 'ईदगाह' की याद आती है। "मिट्टी के खिलौनों की खास बात यह है कि उनसे खेलते हुए वे टूट भी जाएं तो टूटने का कोई गम नहीं।" बच्चों के खेलने के दौरान टूट-फूट तो होती ही है लेकिन हम बड़ों की चिन्ता होती है कि खिलौना न टूटे और फिर इससे होता यह है कि बच्चे अपने खिलौनों से खेल नहीं पाते और खिलौने केवल शो पीस बनकर रह जाते हैं।

## स्कूल और मिट्टी के खिलौने

मिट्टी के खिलौनों के बारे में एक कड़ुवा सच यह है कि हमारे प्राथमिक विद्यालयों में इस गतिविधि को कोई महत्व नहीं दिया जाता। मेरे बचपन के दिनों में केवल नाम मात्र के लिए तीसरी, चौथी, पांचवीं कक्षा की छमाही व सालाना परीक्षाओं में हमें घर से मिट्टी के खिलौने बनाकर ले जाने होते थे और इन्हें हम पड़ोस की चाची या दीदी से बनवा लेते थे। और बनवाते भी क्या थे – कुछ फल जैसे केला, खरबूजा, आम आदि। कुछ सब्ज़ियां जैसे भिंडी, मिर्ची, बैंगन आदि; इन चीज़ों के अलावा हमारे पास अन्य चीज़ों का विकल्प नहीं था।

इस गतिविधि की ओर स्कूल में कुछ खास ध्यान नहीं दिया जाता था। धीरे-धीरे मन में यह बात बैठ गई कि हम जल्दी से जल्दी पांचवीं कक्षा पास करें तो इनसे पीछा छूटे।

कुल मिलाकर इन चीज़ों को बनाने-बनवाने में हमारे शिक्षकों की भी कोई रुचि नहीं थी। अन्य किसी का तो कोई सवाल ही नहीं उठता। हां, यह ज़रूर याद पड़ता है कि कुछ साथियों का इस कार्य में बहुत मन लगता था। इसे हम स्कूल की छमाही-वार्षिक परीक्षा वाले दिन ही देख पाते थे। उस दिन एक सीखने की ललक बनती थी कि कुछ हम भी सीखें। लेकिन उस परीक्षा के बाद फिर छः महीने इस काम से छुट्टी, सो यह ललक भी ज़्यादा देर तक टिक नहीं पाती थी। लेकिन अब मुझे लगता है कि छोटे बच्चों के हाथों व उंगलियों के कुशल संचालन के लिए यह खेल काफी ज़रूरी है। यह बच्चों को खुद करके सीखने का एक अनुभव भी देता है। उनकी इंद्रियों के विकास के लिए तो यह ज़रूरी है ही। इन खिलौनों के निर्माण में बच्चे खुद करते हुए चीज़ों को महसूस करते हैं और निर्जीव मिट्टी को आकार देते हुए उसमें प्राण फूंकते हैं। इस कार्य में रचनात्मकता तो स्वाभाविक रूप से छिपी हुई है क्योंकि बच्चे अपनी कल्पना या अवलोकन को साकार करने की कोशिश कर रहे हैं। छोटी कक्षाओं में यह इसलिए भी ज़रूरी लगता है क्योंकि बच्चे इन खिलौनों में रंग भरते हुए कुछ डिज़ाइन बनाते हैं और स्वयं रंगों का चुनाव करते हैं। इस बात को हम में से कई लोगों ने अनुभव किया होगा

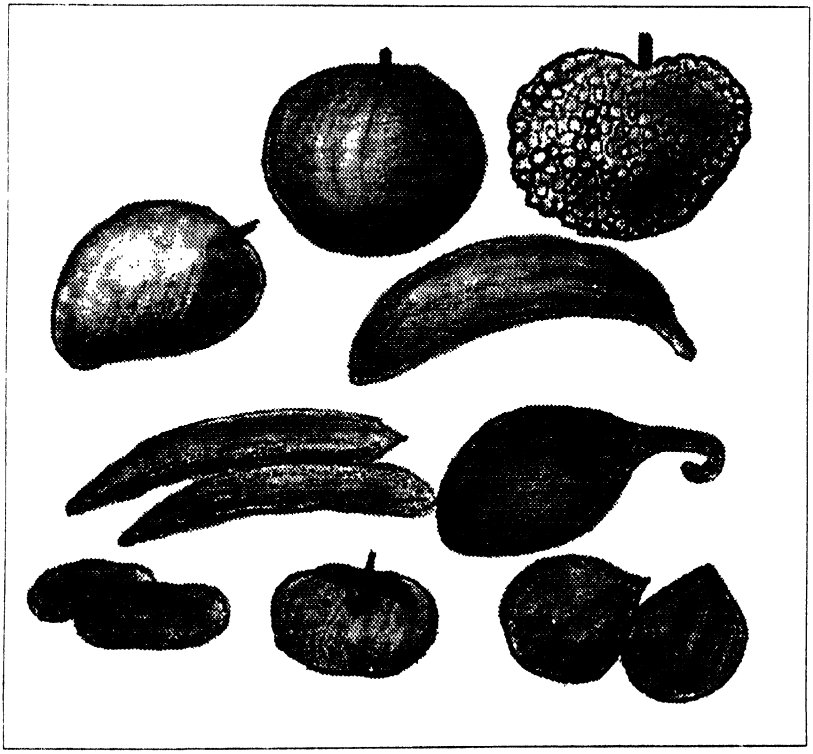

कि इस प्रक्रिया से बच्चों में एक सौन्दर्य-बोध का विकास भी होने लगता है।

## पॉलिश की डिब्बी से गाड़ी

मिट्टी के खिलौनों के बाद अब हम अन्य खिलौनों पर गौर करें जिनको बनाने में बच्चे स्वयं चीज़ों का जुगाड़ करते हैं। बचपन में हम खाली पॉलिश की डिब्बी ढूंढा करते थे, उसे कील से एक डंडे में ठोककर गाड़ी बनाते थे। गाड़ी बनाने के बाद उसे चलाते थे। इसे चलाने का असली मज़ा पानी-कीचड़ व ऊबड़-खाबड़ जगहों पर ही ज़्यादा है। बच्चे इस काम को एकाग्रचित होकर करते हैं।

इस गाड़ी को बनाने के लिए सारी चीज़ें हम जुटाते थे। इसके बाद इस गाड़ी को बनाते भी हम खुद थे। अगर सही नहीं बनती थी तो अपने हमउम्र बच्चों की मदद भी लेते थे। कोई पूछ सकता है कि इस बनाने की प्रक्रिया में सीखना क्या है? सबसे पहले हमें यह सोचना पडता था कि खाली पॉलिश की डिब्बी कहां से मिल सकती है? इसके बाद कील का जुगाड़ करना पड़ता है, फिर डंडे को तोड़कर लाना, इसके बाद हमें यह ध्यान देना होता है कि कील डिब्बी के बीच में ठोंकी जानी चाहिए। कील को डंडी में ठोकते हुए यह ध्यान में रखना होता है कि इसे ऐसे ठोंकना है कि डिब्बी आसानी से घूम सके। इसलिए ज़्यादा ऊपर या नीचे नहीं होना चाहिए।

यह प्रक्रिया पढ़ते वक्त तो साधारण-सी लगती है लेकिन इसमें एक बच्चे के नज़रिए से सघन मानसिक क्रिया है। और यह मानसिक क्रिया बच्चों के लिए रोचक और मज़ेदार भी है। इस आनंद को बच्चे ही महसूस कर सकते हैं। जब यह गाड़ी तैयार होती है तो बच्चों के चेहरे की खुशी देखने लायक होती है। अहसास बिल्कुल वैसा होता है जब हम काफी खोजबीन के बाद किसी समस्या या पहेली का हल ढूंढने पर महसूस करते हैं। इसे ही हम सीखने का आनन्द कहते हैं। हालांकि उक्त प्रक्रिया बहुत सहज लगती है क्योंकि बच्चे इसे बनाने का अभ्यास इतनी बार कर चुके होते हैं कि इसे तुरन्त बना लेते हैं।

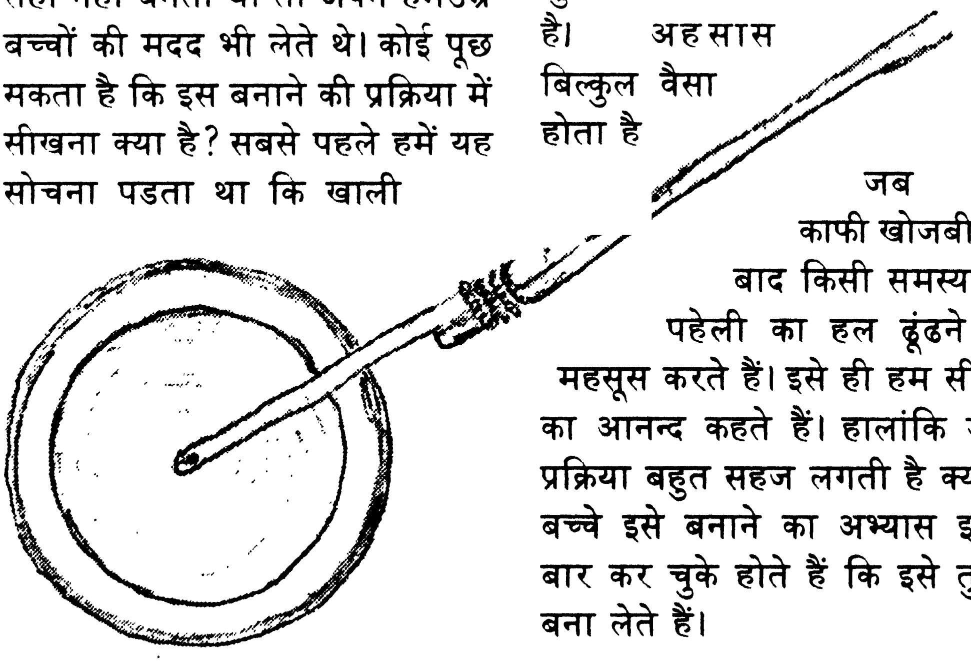

आठ साल के बच्चे द्वारा बनाई गई मिट्टी की नाव और मल्लाह।

खैर, गाड़ी बनाने की प्रक्रिया पर वापस आएं तो समझ में आता है कि डिब्बी वाली गाड़ी को बनाने के लिए ज़रूरी सामान का हमें मन-ही-मन अंदाज़ा लेना पड़ता था। कभी-कभी इसे बनाते हुए गलती हो जाती तो उसे खुद ठीक भी करते थे। काफी प्रयासों के बाद भी अगर असफल रहते तो अपने से बड़ों की मदद लेते। खिलौना निर्माण की इस प्रक्रिया पर हम बारीकी से गौर करें तो महसूस होता है कि इसमें गौण रूप से विज्ञान व तकनीक भी छिपी हुई है। इस प्रक्रिया के बारे में आज सोचते हुए लगता है कि हमारे प्राथमिक विद्यालयों में होने वाली मौखिक या मन-गणित की परीक्षा में क्या ऐसे क्रिया-कलापों को नहीं जोड़ा जा सकता?

इसी तरह से कागज़ के द्वारा बनाई जाने वाली तमाम चीज़ें बच्चे अपने मित्रों से व परिवेश में ही सीखते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि खिलौनों के निर्माण के दौरान बच्चे एक दूसरे से बखूबी सीखते हैं।

इन सब चीज़ों में सहज रीति से बच्चे बहुत कुछ सीखते हैं। यह प्रक्रिया बच्चों के व्यक्तित्व विकास का अभिन्न अंग है। अंत में सवाल यह उठता है कि इन्हें हमारे विद्यालय के पाठ्यक्रम

में कितनी जगह मिलती है? इसका उत्तर सबको मालूम है कि ये सब चीज़ें गौण समझी जाती हैं। महसूस होता है कि हमारे विद्यालय अभी भी इस मानसिकता से ग्रसित हैं कि बच्चों के लिए किताब, तथ्य, अवधारणाएं ही ज़्यादा ज़रूरी हैं। उनके लिए कौशल गौण हैं। इसमें विद्यालय की प्रणाली को दोष दें तो लगता है कि व्यवस्था ही गड़बड़ है। अब आप ही सोचिए कि बुनियादी ज़ोर किन-किन चीज़ों पर दिया जाए।

**कमलेश चन्द्र जोशी:** लखनऊ की नालंदा संस्था में कार्यरत हैं। बच्चों के साथ गतिविधियां करवाने में विशेष रुचि।

**चित्र: वी. एम. भोंडे।** शौकिया चित्रकार, होशंगाबाद में रहते हैं।


# 'संदर्भ' मराठी में भी उपलब्ध

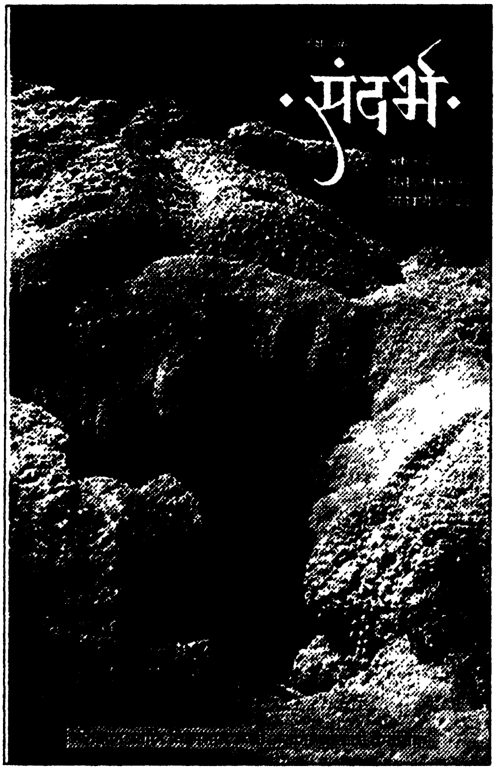


अब संदर्भ मराठी में भी उपलब्ध है। मराठी संदर्भ भी द्वैमासिक है और इसका सदस्यता शुल्क 100/– रुपए है। सदस्यता शुल्क आप मनीऑर्डर से भेज सकते हैं।

सदस्यता शुल्क भेजने अथवा और अधिक जानकारी के लिए निम्न पते पर सम्पर्क करें।

'मराठी संदर्भ'
द्वारा, अमृता क्लिनिक
संभाजी पुल कॉर्नर, कर्वे रोड़
पुणे, महाराष्ट्र पिन: 411004

कहानी

# अनारको और चोर अकल

सतीनाथ षडंगी

अनारको ने देखा है कि ज़िन्दगी में कभी-कभी जो होना होता है वह हो ही जाता है। अब जैसे दोपहर में अम्मी के सो जाने के बाद रसोई में छुपकर इमली का अचार खाना। वह तो अनारको हर रोज़ करती थी। लेकिन कभी अम्मी को पता ही नहीं चला। सोते समय अम्मी की नाक थोड़ी बजती थी। सो हर दोपहर, दो घण्टे करीब-करीब लगातार अन्दर के कमरे में अम्मी की नाक बजती और रसोई में अनारको अचार खाकर उंगलियां चाटती होती। कई बार किंकू को भी जाकर खिला आई थी। पर देखो तो, आज अनारको को पकड़ा जाना था सो पकड़ी गई।

हुआ ये कि सब्ज़ीवाली जो हमेशा सुबह आती थी आज दोपहर में आ गई। हमेशा सामने गेट पर आया करती थी, आज पीछे से आई। दरवाज़ा खट-खटाया। उससे अम्मी तो जागी नहीं, पर मल्ली बिल्ली जो ठाकुर जी के भोग का दूध पी रही थी चौंक गई। मल्ली मुहल्ले की और सब बच्चों की बिल्ली थी। वह बेखटक इस घर से उस घर घूमती रहती और मौका लगते ही कहीं दूध, कहीं मछली, कहीं कुछ चाट जाती थी। बच्चों को छोड़कर मल्ली के बारे में कोई कुछ भला नहीं कहता था। सो आज सब्ज़ीवाली के खट-खटाने से मल्ली चौंक गई और लपककर रसोई की खिड़की पर आ गई। खिड़की के उस तरफ कल्लू था। कल्लू गली का और सब बच्चों का कुत्ता था। हर दोपहर पान की दुकान के पीछे सोया रहता था। पर आज वह खिड़की के बाहर सुस्ता रहा था। मल्ली से उसकी कभी दोस्ती, कभी दुश्मनी होती थी। आज दुश्मनी थी। सो कल्लू भौंकने लगा। अम्मी फिर भी नहीं जागी। सोती रही।

इस सबके दौरान अनारको रसोई में इमली के अचार की तरफ बढ़ रही थी। दो दिन पहले अम्मी ने अचार का जार ऊपर उठाकर रख दिया था। शायद उनको शक हो गया था कुछ-कुछ। सो अनारको एक पैर नल के ऊपर और दूसरा ताक के किनारे रखते हुए खूब सम्हल-सम्हल कर हाथ अचार के जार की तरफ बढ़ा ही रही थी कि एक के बाद एक, इतना कुछ हो गया। कल्लू के भौंकने पर भी अम्मी नहीं जागीं। पर ऊपर से एक कौए ने, जो किसी के घर से हड्डी का टुकड़ा लेकर भाग रहा था, कल्लू के भौंकने से हड्डी गिरा दी। हड्डी आंगन में धोने के लिए रखे बर्तनों पर जा गिरी। हड्डी गिरी गिलास में, गिलास जाकर कढ़ाई पर गिरा, कढ़ाई पतीलों पर और पतीले करछुलों को साथ लेते हुए थालियों पर गिरे और थालियां झनझना कर आंगन में बिखर गईं। अब अम्मी जाग गईं।

अनारको रसोईघर से निकल भी

नहीं पाई थी कि पकड़ी गई। फिर अम्मी ने वो डांट लगाई कि पूछो मत। अनारको चुपचाप खड़ी सुनती रही।

और जो बात उसे सबसे बुरी लगी वह थी कि अम्मी ने उसे बार-बार चोर कहा। नींद टूटने का गुस्सा सारा अनारको पर उतार दिया, "और मैं कहूं कि जार भर के अचार बनाया था, आधा रह गया।" अम्मी ने गुस्से मे कहा, "अब पता चला कि तू चोरी करती है हर रोज़।" अनारको कह भी क्या सकती थी सो चुप रही और जब अम्मी वापस सोने चली गई तो जाकर उदास हो अपने कमरे में बैठ गई।

पर बैठने में भी चैन कहां? सो वह कोने में जाकर आइने के सामने खड़ी हो गई। पर वहां आइना तो था ही नहीं। पीछे की दीवार में मरम्मत हो रही थी सो आइने के पीछे की दीवार से कुछ ईंटें निकाल दी थी मज़दूरों ने। जहां आइना था अब वहां मुंह भर का छेद हो गया था। अनारको जब भी ज़्यादा उदास होती तो इसी कोने पर आकर खड़ी हो जाती थी – आइने के सामने। मगर आज जब अनारको ने चेहरा उठाकर देखा तो उसे अपना चेहरा नहीं कोई दूसरा ही चेहरा दिखा। काला-सा चेहरा था। काला और चमकता हुआ। छोटे-छोटे बाल, लम्बी-सी नाक। और आंखें ऐसी कि जैसे खूब अक्ल वाला हो। भौंहें पतली-पतली, दाढ़ी-मूंछ सफाचट।

चेहरे ने फुसफुसाकर पूछा, "तुम इतनी उदास क्यों हो?" इस पर अनारको ने फुसफुसाकर कहा, "बताती हूं पर तुम हो कौन?" चेहरे ने कहा, "मैं चोर हूं।" अनारको के चेहरे की उदासी थोड़ी कम हुई, उसने कहा, "मैं भी चोर हूं।" उस चेहरे ने कहा, "अरे वाह मज़ा आ गया, फिर मिलाओ हाथ।" फिर छेद में से उसने अपना लम्बा हाथ बढ़ा दिया, काला-सा पतला हाथ। बाद में अनारको ने अपना हाथ सूंघा। फिर फुसफुसाकर पूछा, "तुम्हारे हाथ से सरसों के तेल की बू क्यों आती है?" चोर ने छेद से पीछे हटते हुए कहा, "हाथ क्या मैंने सारे बदन पर सरसों का

तेल लगाया हुआ है।'' अनारको ने छेद में से अब पूरे चोर को देखा। सिर्फ कच्छा पहना हुआ, पेट थोड़ा निकला हुआ, पतली-पतली टांगें। और सारा बदन तेल से चमकता हुआ। छेद के पास आकर चोर ने कहा, ''इसी की वजह से लोग मुझे पकड़ भी लेते हैं तो मैं फिसलकर निकल जाता हूं।'' अनारको ने सोचा आइडिया अच्छा है। पर उसने सोचा अम्मी उसे कच्छा पहनकर घूमने ही नहीं देंगी।

उसने चोर से कहा, ''मैं रसोई घर से इमली का अचार ले रही थी कि अम्मी ने देख लिया। फिर वो डांट लगाई कि मत पूछो। कहा कि मैं चोर हूं।'' चोर ने दांत निकालकर हंसते हुए कहा, ''अरे तुमने अपने घर से सामान उठाया तो तुम्हें चोर कहा और लोग मुझे चोर कहते हैं क्योंकि मैं दूसरों के घर से सामान उठाता हूं।'' अनारको ने फुसफुसाकर डांटा, ''हंसते हो, देखते नहीं मैं कितनी उदास हूं।'' चोर ने हंसना बंद कर दिया। फिर अनारको ने कहा, ''कहने को सिर्फ यह घर मेरा है। मेरे कपड़े तक मेरे नहीं हैं। नाम को मेरे हैं पर कब कौन-सा फ्रॉक पहनना है वह अम्मी तय करती हैं। कपड़े कब गंदे और कब रानी मौसी की लड़की को देने लायक हो गए हैं ये भी अम्मी तय करती हैं। कमरा मेरा है पर अम्मी तय करती हैं कि कहां क्या रखना है। और बिना मांगे, बिना पूछे कुछ खा लो, तो चोर कहा जाता है। चोर अंकल, मेरा तो कुछ भी नहीं है।''

चोर अंकल मुस्कुराए और बोले, ''मेरे पास भी कुछ नहीं है, तभी तो मैं चोरी करता हूं। देखो, भगवान ने जब इंसान को सांस लेने के लिए हवा और पीने के लिए पानी दिया है तो ऐसा हो ही नहीं सकता कि उन्होंने सबके लिए खाना नहीं भेजा होगा।' अनारको को लगा कि चोर अंकल की बातों में दम है। उसने सोचा जब भगवान सारे जानवरों, चिडियों, मछलियों यहां तक कि ज़मीन के नीचे रहने वाले कीड़ों तक के लिए खाना जुटाते हैं तो वे इंसानों के लिए भी खाना ज़रूर जुटाते होंगे। चोर अंकल ने पूछा, ''फिर बताओ मेरे हिस्से का खाना कहां गया?

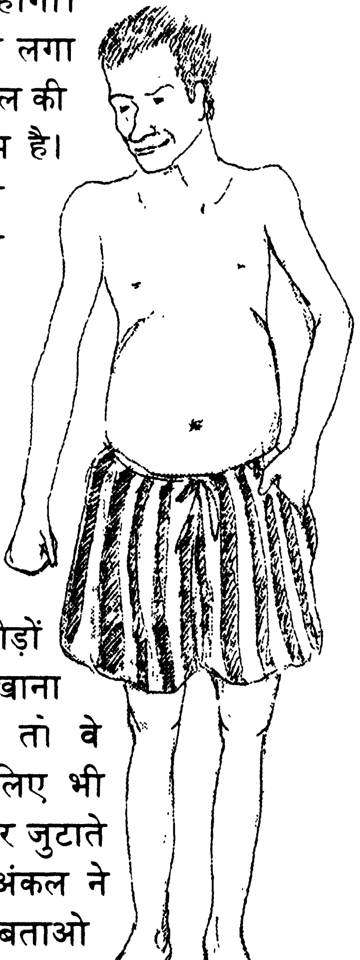

लोग कहते हैं नौकरी कर लो। पर मैं किसी की गुलामी क्यों करूं? सबसे बड़ी बात तो ये है कि मेरे हिस्से का खाना गया किधर? मुझे भूख लगे या इमली का अचार जैसा कुछ खाने का मन करे तो मैं खाऊं कहां से?"

अनारको ने सोचा यही तो मेरी परेशानी है और चोर अंकल मुझसे ही सवाल पूछ रहे हैं। पर उसने कुछ कहा नहीं। चोर अंकल कहते जा रहे थे, "असल बात यह है कि मेरे हिस्से के खाने पर औरों का कब्ज़ा है। भगवान ने तो हिसाब से भेजा पर बीच में औरों ने माल उड़ा लिया।" अनारको ने पूछा, "किसने उड़ाया तुम्हारा माल, अंकल?" चोर ने कहा, "अब मैं कहां-कहां पता लगाऊं, किस-किस का नाम गिनाऊं। मैं तो इतना जानता हूं कि जिसके पास भी ज़रूरत से ज़्यादा माल है उसने मेरे हिस्से के माल पर कब्ज़ा कर रखा है। सो मैं मालदारों से माल उड़ाता हूं।" अनारको ने पूछा, "तुम्हें डर नहीं लगता है, पुलिस से?" चोर ने कहा, "डर तो लगता है। खूब पीटते हैं साले, पर माल में से हिस्सा दे दो तो छोड़ भी देते हैं।"

दूर कारखाने में पांच बजे का भौंपू बजा। चोर ने कहा, "अच्छा चलता हूं। आज रात टी. वी. पर पिक्चर आएगी, माल उड़ाने के लिए अच्छा मौका है। घर के सब लोग पिक्चर देखने में मशगूल होते हैं और रसोईघर से पतीला लेकर भागो तो किसी को पता भी नहीं चलता है।" चोर अंकल ने छेद में से हाथ अन्दर डालकर अनारको के बाल सहलाए और फिर चलते बने।

अब अनारको के बालों से सरसों के तेल की बू आ रही थी। पर अनारको की उदासी कब की जा चुकी थी। बाहर निकली तो देखा कल्लू और मल्ली की दोस्ती हो गई है और दोनों धूल पर लेट-लेटकर झूठ-मूठ की लड़ाई लड़ रहे हैं। अनारको ने सीटी मारकर दोनों को बुलाया; फिर एक तरफ मल्ली एक तरफ कल्लू और बीच में अनारको, तीनों मैदान की तरफ निकल गए। मैदान में राम और रावण की लड़ाई चल रही थी। जब से टी.वी. पर रामायण आने लगा है, ले देकर एक ही खेल रह गया है। बाज़ार में प्लास्टिक के तीर धनुष और गदा भी बिकने लगे हैं और सब बच्चे उनसे मारपीट करते हैं। अनारको को इस खेल में कोई मज़ा नहीं आता था। अब ये कहां की बात हुई कि राम की साइड ही हमेशा जीतेगी। पिछली बार अनारको रावण की साइड में थी और राम के साइड वालों की ऐसी पिटाई की थी उसने कि सब 'टाइम आउट', 'टाइम आउट' चिल्लाने लगे थे। गोलू की सबसे ज़्यादा ठुकाई हुई थी सो उसने ज़ोर लगाकर कहा कि राम के साइड वालों को पीटने पर पाप चढ़ता

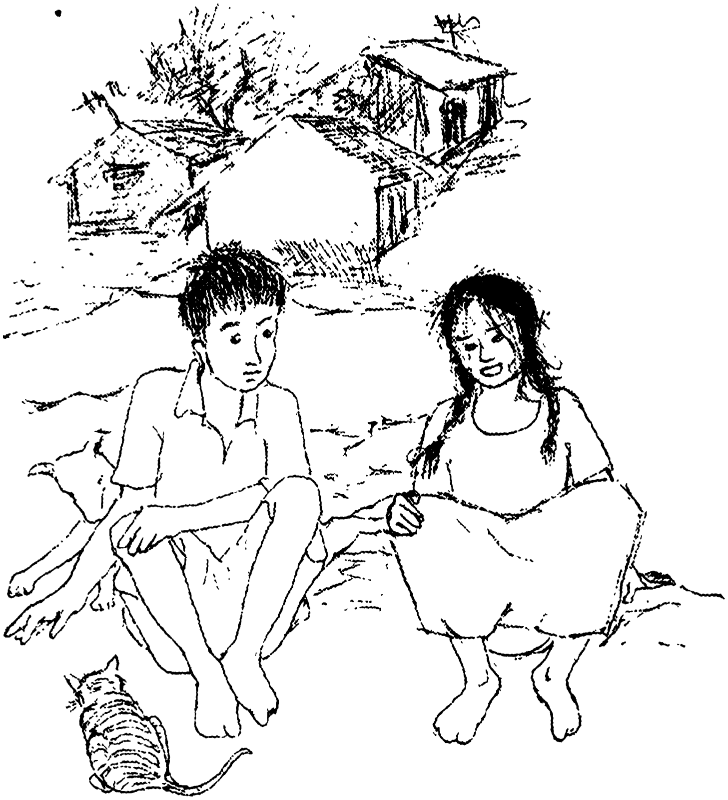

है। सो अनारको खेल में से निकल गई थी। उसे पाप से डर नहीं लगता, बेवकूफी से चिढ़ होती थी। उधर से किंकू की नाक पर तीर लगा था; अच्छा हुआ कि आंख पर नहीं लगा; सो वह भी खेल से निकल गया था। आज भी अनारको खेलने नहीं गई थी। असल में उसका बातें करने का मन कर रहा था सो वह किंकु को ढूंढने निकली थी। आज उसने सचमुच के चोर को देखा था, देखा ही नहीं उससे बातैं की थी और हाथ भी मिलाया था। अब इतना कुछ हो जाए तो किसी को बताए बगैर भला कैसे रहा जा सकता है। पर अनारको को मालूम है कि चोर अंकल की बात सबको नहीं बता सकती सो वह पेट भर बात लिए किंकु की तलाश कर रही थी। अनारको से पहले कल्लू ने किंकु को ढूंढ लिया। किंकू मैदान के किनारे गड्ढे के अंदर था और हवलदार अंकल के बगीचे से चुराए अमरूद खा रहा था। ज़मीन सूंघते-सूंघते कल्लू किंकु के पास पहुंच गया और पूंछ हिलाते हुए उसका मुह चाटने लगा। फिर अनारको भी उसके पास पहुंच गई और किंकु को सारी कहानी सुनाई, इमली के अचार से लेकर चोर अंकल के जाने तक की।

अनारको किंकु से बात करती हुई और किंकु उसकी बातों को सुनते हुए

इतना मशगूल हो गए कि कब शाम हो गई, सड़कों पर बत्तियां जल गईं, सारे बच्चे घर लौट गए, उन्हें पता ही नहीं चला। कल्लू और मल्ली दौड़ते-दौड़ते-खेलते थक चुके थे सो दोनों उनके पास बैठ गए थे। जैसे वो भी अनारको की बात सुन रहे हों। बीच-बीच में किंकु कुछ सवाल पूछ बैठता। फिर दोनों उस पर बात करने लगते। अनारको की सारी कहानी खत्म भी नहीं हुई थी कि उधर नुक्कड़ की तरफ से खूब शोर होने लगा। लोग चिल्ला रहे थे, "पकड़ो-पकड़ो, चोर-चोर", एक साथ ढेर सारे लोग दौड़ते जा रहे थे और चिल्ला रहे थे। एक साथ कुत्ते भौंकते जा रहे थे। अनारको का दिल धक-धक करने लगा। उसने कल्लू के कान में फुसफुसाकर कहा, "कल्लू भौंकना मत चुप रहना।" कल्लू जैसे समझ गया, वह चुप रहा। तभी दौड़ते हुए पैरों की आवाज़ आई। चांदनी रात थी इसलिए दूर-दूर तक साफ दिखता था। अनारको ने देखा चोर अंकल दौड़ते हुए इधर ही आ रहे हैं।

अनारको ने ज़रा ज़ोर से फुसफुसाते हुए कहा, "चोर अंकल, चोर अंकल यहां आ जाओ, मैं हूं।" चोर अंकल पास आए। उनके हाथ में कांसे की एक थाली थी और वह बुरी तरह हांफ रहे थे। अनारको ने कहा, "चोर अंकल, ये किंकु है, मेरा दोस्त। घबराओ नहीं, तुम यहां गड्ढे में छुप जाओ कोई तुम्हें ढूंढ नहीं पाएगा।" इतने में उधर से कुछ लोग दौड़ते हुए आते दिखाई दिए। पलक झपकते चोर अंकल गड्ढे के अंदर चले गए। दौड़ते हुए लोगों में से बंसी हलवाई और सरदार अंकल उनकी तरफ आए। उन्होंने अनारको और किंकु को देखा तो चौंक गए। बंसी हलवाई ने कहा, "अरी मुनिया, तू यहां क्या कर रही है इतने अंधेरे में? तुझे मालूम नहीं एक चोर भागा है इसी तरफ।" अनारको ने बिल्कुल भोली बनकर कहा, "नहीं अंकल, किंकु और मैं तो ट्यूशन पढ़कर लौट रहे हैं। और इधर तो कोई भी नहीं आया।" तभी सरदार अंकल ने आवाज़ देकर कहा, "अरे इधर नहीं तालाब की तरफ भागा होगा।" फिर दोनों दौड़ते हुए दूसरी ओर चले गए। लोगों की आवाज़ें दूर होती गईं। अनारको और किंकु ने एक साथ राहत की लम्बी सांस छोड़ी।

तब तक चोर अंकल गड्ढे से बाहर आ गए। बोले, "बाल-बाल बच गया। ये टी.वी. वाले भी मरे क्या-क्या करते हैं। पिक्चर के बदले प्रधानमंत्री का राष्ट्र के नाम संदेश दिखा दिया। सो सबने टी. वी. बंद किया हुआ था। रसोईघर में ठीक से घुस भी नहीं पाया था कि हल्ला शुरू हो गया। फिर भी यह थाली तो मार ही ली।" कहते हुए चोर अंकल ने कांसे की थाली ज़मीन पर सामने रख दी। फिर उन्होंने

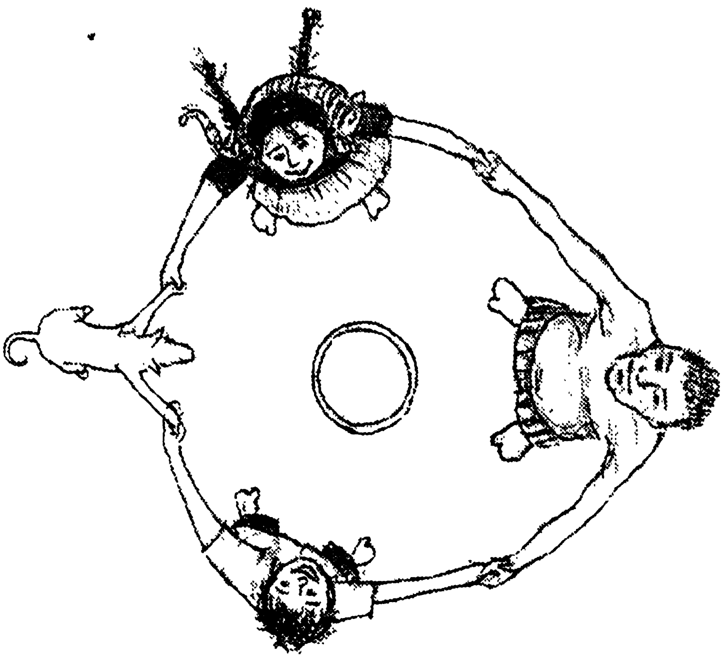

कच्छे की जेब में से इमली का अचार निकाला और कहा, "भागते-भागते ये इमली भी उठा लाया, लो खाओ।" अनारको, किंकु और चोर अंकल ने इमली का अचार उंगली चाट-चाट कर खाया। मल्ली और कल्लू ने अपना हिस्सा खाया फिर सबकी अंगुलियां चाटीं।

फिर चोर अंकल ने एक तरफ अनारको का हाथ पकड़ा, दूसरी तरफ किंकु का। मल्ली अनारको के कंधे पर बैठी थी और अनारको व किंकु ने कल्लू की एक-एक टांग पकड़कर उसे दो टांगों पर खड़ा कर दिया था।

गोल घेरे में धीरे-धीरे सब लोग नाचने लगे। घेरे के बीच में कांसे की थाली पर चांद की परछाई से थाली चमक रही थी। और पांचों चोर चांदनी रात में जश्न मना रहे थे।

**सतीनाथ षडंगी:** भोपाल गैस त्रासदी के पीड़ितों के लिए भोपाल में संभावना ट्रस्ट के ज़रिए चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध करवाते हैं। साथ ही लेखन में गहरी रुचि।

**चित्र: विप्लव शशि।** विप्लव बड़ौदा के एम. एस. विश्वविद्यालय से कला का अध्ययन कर रहे हैं।

# वर्ष 5: अंक 26 से 30

## अंक 26, नवंबर 1998 - अप्रैल 1999


आपने लिखा .... 4
सीटी मारो .... 11
जब हवा न बहे तो .... 17
क्यूं है रात अंधेरी .... 22
क्या हैं ये जुड़वां .... 31
क्यूं कम आंकते हैं बच्चों .... 37
खोजिए सही रास्ता .... 42
प्रीकैम्ब्रियन जीवाश्म .... 43
ज़रा सिर तो खुजलाइए .... 55
काली स्याही अलग-अलग .... 56
चंद्रमा: सवालों के जवाब .... 62
चंद्रमा की कलाएं .... 70
कुछ भूगोल, कुछ इतिहास .... 72
इक आग का दरिया है .... 76
गोल हुआ भूगोल .... 85
किंग कोबरा .... 94


## अंक 27, मई-जून 1999


एक वैज्ञानिक को तराशना .... 5
ब्लैक होल यानी .... 17
खग्रास सूर्य ग्रहण .... 28
जवाब सीखें या .... 34
प्रारंभिक बौद्धों की .... 39
पौधों में भोजन .... 55
स्कूली विज्ञान पर .... 65
माइकल फैराडे .... 78
टॉर्च बेचने वाले .... 87
किसने थूक दिया .... 95


---

## अंक 28, जुलाई-अगस्त 1999


आपने लिखा .... 4
बच्चों की भाषा .... 7
ठोस, द्रव, गैस और कांच .... 15
ज्यामितीय आकृतियां .... 23
परीक्षाएं और सिर्फ .... 37
एक बीजपत्री पौधों में .... 45
क्या बहे बिजली के तार में ... 50
मेरा एक प्रयोग .... 65
कुछ खेल .... 79
शैक्षिक नवाचार और .... 82
छिपा रहस्य .... 89
शुक्राणुओं का सफरनामा .... 94

## अंक 29, सितंबर-अक्टूबर 1999


आपने लिखा . . . 4
पदार्थ कोलॉयड . 9
एक दिन कक्षा में 16
चुंबक इतिहास के. 23
बच्चों की भाषा . 39
ज़रा सिर तो . . . 46
सिंथेटिक मिल्क यानी . . 47
अब बच्चे स्कूल जाते हैं 53
दबाव – कुछ पहलू . . . 59
सवालीराम . . . . 66
सोमनाथ: एक इतिहास . 69
एक शंख बिन कुतुबनुमा 88
खरमोर . . . . 93


## अंक 30, नवंबर 1999 - मार्च 2000


आपने लिखा . . . . 4
नदी अपहरण . . . . 9
चुंबक इतिहास के . . . . 19
हवा का दबाव . . . . 35
पौधों में भोजन . . . . 43
ज़रा सिर तो खुजलाइए 57
स्त्री शिक्षा . . . . 59
भारत में रेखागणित . . 71
कहां है मेरे दोस्त . . . . 87
जीवन चक्र ऐसा भी . . 96


**इंडेक्स देखने का तरीका:** पांच अंकों में प्रकाशित सामग्री का विषय आधारित वर्गीकरण किया गया है। कई लेखों में एक से ज़्यादा मुद्दे शामिल हैं इसलिए वे लेख एक से ज़्यादा स्थान पर रखे गए हैं। लेख के शीर्षक और लेखक के नाम के साथ पहले बोल्ड में उस अंक का क्रमांक है जिसमें वह लेख प्रकाशित हुआ है। फुलस्टाप के बाद उस लेख का पृष्ठ क्रमांक दिया गया है।

## भौतिकी (Physics)


| | | |
|---|---|---|
| जब हवा न बहे तो | | 26.17 |
| क्यूं है रात अंधेरी | सुबीर सरकार | 26.22 |
| चंद्रमा –1 | – | 26.62 |
| आधा है चंद्रमा | अरविंद गुप्ते | 26.65 |
| चंद्रमा की कलाएं | विजयशंकर वर्मा | 26.70 |
| ब्लैक होल यानी स्याह सुराख | विजयशंकर वर्मा | 27.17 |
| खग्रास सूर्य ग्रहण | | 27.28 |
| माइकल फैराडे एक जीवट वैज्ञानिक | | 27.78 |
| क्या बहे बिजली के तार में? | अजय शर्मा | 28.50 |
| चुंबक इतिहास के आइने में (भाग-1) | लॉयड विलियम टेलर | 29.23 |
| दबाव कुछ पहलू | अमिताभ मुखर्जी | 29.59 |
| चुंबक इतिहास के . . . (भाग-2) | लॉयड विलियम टेलर | 30.19 |
| हवा का दबाव | अमिताभ मुखर्जी | 30.35 |


## रसायन शास्त्र (Chemistry)


| | | |
|---|---|---|
| काली स्याही के अलग-अलग रंग | अम्लान दास | 26.56 |
| ठोस, द्रव, गैस और कांच | सुशील जोशी | 28.23 |
| पदार्थ नहीं तंत्र कोलॉयडीय | सुशील जोशी | 29.09 |
| सिंथेटिक मिल्क . . . | अम्लान दास | 29.47 |


## प्राणी शास्त्र (Zoology)


| | | |
|---|---|---|
| क्या हैं ये जुडवां | चेतना खरे | 26.31 |
| किंग कोबरा | के. आर. शर्मा | 26.94 |
| प्रवासी मछली हिलसा | | 26.97 |
| जब हमला हो तो | | 27.86 |
| किसने थूक दिया पत्तों पर | के. आर. शर्मा | 27.96 |
| शुक्राणुओं का सफरनामा | के. आर. शर्मा | 28.94 |
| आंसू क्यों टपकते हैं? | सवालीराम | 29.66 |
| जीवन चक्र ऐसा भी . . . | उमेश चौहान | 30.96 |

### वनस्पति शास्त्र (Botany)

| | | |
|---|---|---|
| पौधों में भोजन | किशोर पंवार | 27.55 |
| एकबीजपत्री बीजों में. . . | स्निग्धा मित्रा | 28.45 |
| कुछ खेल एंज़ाइम के साथ | किशोर पंवार | 28.79 |
| पत्तियों, प्रकाश और . . . | किशोर पंवार | 30.43 |

### गणित (Mathematics)

| | | |
|---|---|---|
| खोजिए सही रास्ता | | 26.42 |
| कितनी बढ़ी त्रिज्या | | 26.55 |
| ज्यामितीय आकृतियां | अभिषेक धर | 28.23 |
| ज़रा सिर तो खुजलाइए | | 28.64 |
| ज़रा सिर तो खुजलाइए | | 29.46 |
| वृत का क्षेत्रफल | | 30.57 |
| भारत में रेखागणित (भाग-1) | रामकृष्ण भट्टाचार्य | 30.71 |

### इतिहास (History)

| | | |
|---|---|---|
| कुछ भूगोल, कुछ इतिहास. . . | सी. एन. सुब्रह्मण्यम | 26.72 |
| प्रारंभिक बौद्धों की. . . | उमा चक्रवर्ती | 27.39 |
| सोमनाथ: एक इतिहास. . . | रोमिला थापड़ | 29.69 |

### भूगोल/भूविज्ञान (Geography/Geology)

| | | |
|---|---|---|
| प्रीकैम्ब्रियन जीवाश्म | माधव केलकर | 26.43 |
| गोल हुआ भूगोल | लेव तोलस्तोय | 26.85 |
| नदी अपहरण | संजय कुमार तिवारी | 30.09 |

### भाषा

| | | |
|---|---|---|
| बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता -1 | रमाकांत अग्निहोत्री | 28.07 |
| बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता -2 | रमाकांत अग्निहोत्री | 29.39 |

## कुछ तरीके पढ़ाने के


| | | |
|---|---|---|
| सीटी मारो | आशा कचरु | 26.11 |
| क्यूं आंकते हैं. . . | कैरन हैडॉक | 26.37 |
| एक वैज्ञानिक को तराशना | रिचर्ड पी. फाइनमेन | 27.05 |
| जवाब सीखें या जवाब देना सीखें | कैरन हैडॉक | 27.34 |
| परीक्षाएं और सिर्फ परीक्षाएं | कैरन हैडॉक | 28.37 |
| मेरा एक प्रयोग | रोमा देव हालदार | 28.65 |
| एक दिन कक्षा में | काजल कुमार नंदी | 29.17 |


## बच्चों के साथ अनुभव


| | | |
|---|---|---|
| सीटी मारो | आशा कचरु | 26.11 |
| गोल हुआ भूगोल | लेव तोलस्तोय | 26.85 |
| जवाब सीखें या जवाब देना सीखें | कैरन हैडॉक | 27.34 |
| स्कूली विज्ञान पर बच्चों | पदमा सारंगपाणि | 27.65 |
| मेरा एक प्रयोग | रोमा देव हालदार | 28.65 |
| शैक्षिक नवाचार और . . . | दिनेश भट्ट | 28.82 |
| एक दिन कक्षा में | काजल कुमार नंदी | 29.17 |
| अब बच्चे स्कूल जाते हैं | प्रभाकर पोड़ापाटी | 29.53 |


## प्रयोग, गतिविधि एवं मॉडल


| | | |
|---|---|---|
| काली स्याही के अलग-अलग रंग | अम्लान दास | 26.56 |
| कुछ खेल एंज़ाइम के साथ | किशोर पंवार | 28.79 |


## पाठ्यक्रम की समीक्षा, सर्वे एवं रिपोर्ट


| | | |
|---|---|---|
| स्कूली विज्ञान पर बच्चों | पदमा सारंगपाणि | 27.65 |


## जीवनी, संस्मरण, प्रसंग


| | | |
|---|---|---|
| एक वैज्ञानिक को तराशना | रिचर्ड पी. फाइनमेन | 27.05 |
| माइकल फैराडे एक जीवट वैज्ञानिक | – | 27.78 |

## पुस्तक अंश

| | | |
|---|---|---|
| गोल हुआ भूगोल | लेव तोलस्तोय | 26.85 |
| एक वैज्ञानिक को तराशना | रिचर्ड पी. फाइनमेन | 27.05 |

## कहानी/व्यंग्य

| | | |
|---|---|---|
| इक आग का दरिया है | कैरल चैपक | 26.76 |
| टॉर्च बेचने वाले | हरिशंकर परसाई | 27.87 |
| छिपा रहस्य | क्वेंटीन रेनॉल्ड | 28.89 |
| एक शंख बिन कुतुबनुमा | शरद जोशी | 29.88 |
| कहां है मेरे दोस्त. . . | प्रदीप गोठोस्कर | 30.87 |

## अन्य

| | | |
|---|---|---|
| म्त्री शिक्षा... | ज्यों द्रेज़ | 30.59 |


* * * * *

**विभिन्न सूचक कब यानी किस pH पर रंग बदलते हैं और अम्लीय, क्षारीय व बीच की स्थिति में उनके रंग क्या-क्या होते हैं यह प्रदर्शित करता है दाहिनी ओर का चित्र। इसमें तीनों तरह के दो-दो सूचकों के उदाहरण लिए गए हैं; लिटमस और ब्रोमोथाइमोल ब्लू ठीक pH 7 पर रंग बदलते हैं, मिथाइल ऑरेंज व ब्रोमोफिनॉल ब्लू 7 से कम pH पर रंग बदलते हैं, फिनॉफ्थेलीन एवं फिनोल रेड 7 से अधिक pH पर रंग बदलते हैं।**

**विस्तृत जानकारी के लिए देखिए पृष्ठ 9 पर दिया गया लेख।** →

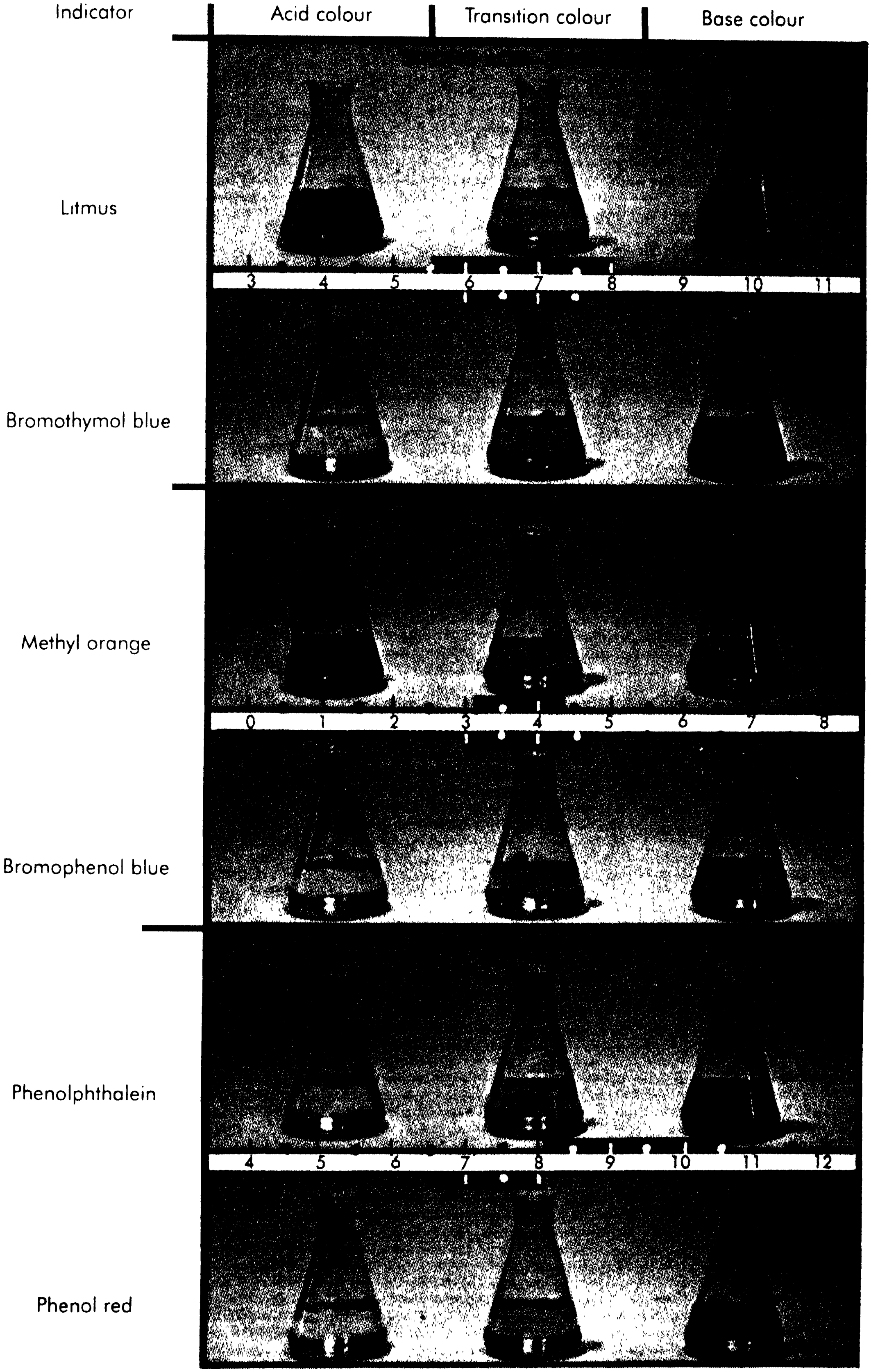
Indicator
Acid colour
Transition colour
Base colour
Litmus
3 4 5 6 7 8 9 10 11
Bromothymol blue
Methyl orange
0 1 2 3 4 5 6 7 8
Bromophenol blue
Phenolphthalein
4 5 6 7 8 9 10 11 12
Phenol red

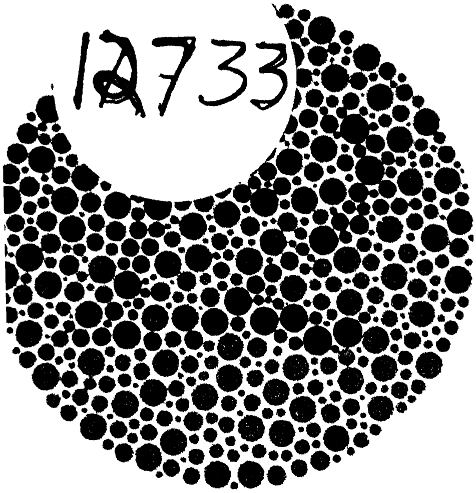

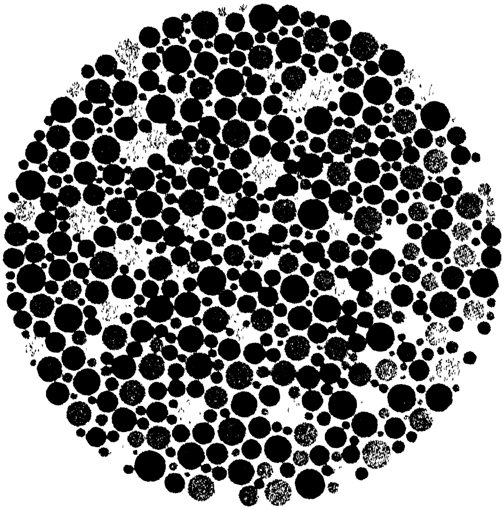

कलर ब्लांइडनेस यानी वर्णान्धता पहचानने का टेस्ट

**Bharat Petroleum**

भारत पेट्रोलियम के नाम से तो आप भलीभांति परिचित होंगे ही। हाँ, वही भारत पेट्रोलियम जिनके पेट्रोल पम्प पर आप स्कूटरों, रिक्शा, मोटरों आदि को पेट्रोल या डीज़ल भरवाते हुए देखते हैं। खाना बनाने के लिए रसोई गैस तो भारत पेट्रोलियम देता ही है, साथ ही स्टोव जलाने के लिए केरोसिन भी। जिन सड़कों पर आप चलते हैं वे डामर की सड़कें बनाने के लिए डामर, और जिन हवाई जहाज़ों को आसमान में उड़ता देखते हैं, उनके लिए ईंधन भी भारत पेट्रोलियम देता है।

जीवन के हर अंग में आप भारत पेट्रोलियम को अपने साथ पाएँगे। व्यवसाय के साथ भारत पेट्रोलियम सामाजिक कार्यों में भी हमेशा आगे रहता है। चाहे आपदाग्रस्तों की सहायता करनी हो या गाँवों को सुविधाएँ उपलब्ध करानी हों। संदर्भ पत्रिका का यह अंक आप तक पहुँचाना भी भारत पेट्रोलियम के शिक्षा प्रसार का एक अंग है।

**एकलव्य की ओर से राजेश खिंदरी द्वारा भंडारी ऑफसेट प्रिंटर्स, ई-3/12, अरेरा कॉलोनी, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य ई-1/25 अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462016 से प्रकाशित। संपादक-राजेश खिंदरी**